हिंदी यू.एस.ए की त्रैमासिक ई-पत्रिका

कर्मभूमि

वर्ष ५, अंक १६ नवम्बर २०१२

www.hindiusa.org

1-877-HINDIUSA

स्थापना: नवंबर २००१ संस्थापक: देवेन्द्र सिंह

हिन्दी यू.एस.ए. के किसी भी सदस्य ने कोई पद नहीं लिया है, किन्तु विभिन्न कार्यभार वहन करने के अनुसार उनका परिचय इस प्रकार है:

निदेशक मंडल के सदस्य

देवेन्द्र सिंह (मुख्य संयोजक) - 856-625-4335

रचिता सिंह (शिक्षण तथा प्रशिक्षण संयोजिका) - 609-248-5966

राज मित्तल (धनराशि संयोजक) - 732-423-4619

अर्चना कुमार (सांस्कृतिक कार्यक्रम संयोजिका) - 732-372-1911

माणक काबरा (प्रबंध संयोजक) - 718-414-5429

सुशील अग्रवाल (पत्रिका 'कर्मभूमि' संयोजक) - 908-361-0220

शिक्षण समिति

रचिता सिंह - कनिष्ठा १, उच्चस्तर २

धीरज बंसल - कनिष्ठा २

मोनिका गुप्ता - प्रथमा १ स्तर

अर्चना कुमार - प्रथमा २ एवं मध्यमा २

रश्मि सुधीर - मध्यमा १

सुशील अग्रवाल - उच्च स्तर १

पाठशाला संचालक/संचालिकाएँ

एडीसन: राज मित्तल (732-423-4619),

माणक काबरा (718-414-5429), गोपाल चतुर्वेदी (908-720-7596)

सा. ब्रुंस्विक: उमेश महाजन (732-274-2733),

पंकज जैन (908-930-6708), प्रतीक जैन (646-389-5246)

पाठशाला संचालक/संचालिकाएँ

मॉटगोमरी: सुधा अग्रवाल (908-359-8352)

पिस्कैटवे: दीपक लाल (732-763-3608)

ई. ब्रुंस्विक: मैनो मुर्मु (732-698-0118)

वुडब्रिज: अर्चना कुमार (732-372-1911)

जर्सी सिटी: सुब्बु नटराजन (201-984-4766)

प्लेंसबोरो: गुलशन मिर्ग (609-451-0126)

लावरेंसविल: रत्ना पाराशर (609-584-1858), मीना राठी (609-273-8737)

ब्रिजवाटर: सुरुची नायर (908-393-5259)

चैरी हिल: देवेंद्र सिंह (609-248-5966)

चैस्टरफील्ड: शिप्रा सूद (609-920-0177)

फ्रैंक्लिन: दलवीर राजपूत (732-422-7828)

होमडेल: सुषमा कुमार (732-264-3304)

मोनरो: सुनीता गुलाटी (732-656-1962)

नॉरवॉक: बलराज सुनेजा (203-613-9257), विक्रम भंडारी (203-434-7463)

नॉर्थ ब्रुंस्विक: गीता टंडन (732-789-8036)

स्टैमफर्ड: मनीष महेश्वरी (203-522-8888)

हम को सारी भाषाओं में हिन्दी प्यारी लगती है, नारी के मस्तक पर जैसे कुमकुम बिंदी सजती है।

संपादकीय

प्रिय पाठक गण सादर नमस्ते,

प्रस्तुत है कर्मभूमि पत्रिका का नवीनतम अंक। यह अंक किसी विशेष विषयवस्तु पर आधारित नहीं है। यह हिंदी यू.एस.ए. के अपने लक्ष्य की पूर्ति की ओर अग्रसर होने का एक और प्रयास अवश्य है।

किसी भी देश की भाषा, सारथी बनकर उसके संस्कृति रूपी रथ पर आरूढ़ होकर उस देश की सभ्यता व संस्कृति को सुचारु रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी सींचती है। जितना आवश्यक सभ्यता व संस्कृति को संजोय रखना है, उतना ही आवश्यक है भाषा को पकड़े रखना। हिंदी यू.एस.ए. पिछले 12 वर्षों से निरंतर इसी कार्य में प्रयास रत है। कर्मभूमि पत्रिका का प्रकाशन भी इसी भागीरथी कार्य का एक अभिन्न अंग है। बहुत ही सुखद व गर्व की अनुभूति होती है जब हिंदी यू.एस.ए. में पढ़ रहे विद्यार्थी अपनी छोटी से लेखनी से अपने विचार हिंदी में प्रकट कर पाते हैं। आप सभी से हिंदी यू.एस.ए. आव्हान करता है कि आप भी अपनी सामर्थ्य अनुसार इस महायज्ञ की सफलता में इसी प्रकार अपना योगदान दें।

कर्मभूमि की स्थापना का उद्देश्य अमेरिका में पले-बढ़े केवल भारतीय हिंदी भाषी व अहिंदी भाषी बच्चों को हिंदी में लिखे लेखों को पढ़ने के साथ-साथ अपने लेख लिखने में उत्साहवर्धन करना ही नहीं है अपितु माता-पिता को प्रेरित करना भी है कि वे भी अपने अनुभव, जीवन के दृश्यों की झलकियाँ हिंदी में लिखें। कर्मभूमि में जाने-माने कवियों व लेखकों की रचनाएँ इसीलिए भी सम्मिलित की जाती हैं ताकि पाठक उनकी लेखनी से लाभांवित हो सकें।

हिंदी यू.एस.ए सदैव आपकी प्रतिक्रियाओं का स्वागत करता है जो हमारे लिए प्राण वायु के समान हैं। यदि हम आने वाली पीढ़ी को नीचे लिखी पंक्तियों का अर्थ समझा पाएँ और उन्हें अपने जीवन में उतारने के लिए प्रेरित कर पाएँ तो हमारा जीवन सार्थक हो जाएगा।

रसों छंदों अलंकारों का सुरभित गान है हिन्दी

सनातन प्रेम संस्कारों का इक वरदान है हिंदी

बही यू.एस.ए के आँगन में जो हिंदी की पुरवाई

लगा हिंदुस्तां का इक विजय अभियान है हिंदी

हिंदी यू.एस.ए. आपकी आलोचनाओं व समालोचनाओं का स्वागत करता है। आप कर्मभूमि के लिए अपनी रचनाएँ निरंतर भेज कर हिंदी प्रसार के पुण्य भागीरथी कार्य में सहभागी बनें।

धन्यवाद,

कर्मभूमि

लेख–सूची

०५ - आपके पत्र

०७ - ग्यारहवाँ हिंदी महोत्सव

११ - मुंशी प्रेमचंद और भारतीय राजनैतिक संविधान

१६ - अच्छा या सही

१८ - अपनी भाषा से भेद क्यों?

२१ - आजादी का मन्तव्य क्या?

२४ - संकल्प का बल

३० - वाश्विता एक नाम

३६ - 300 रामायण: कथ्य और तथ्य

४२ - हनुमान चालीसा चौपाई

४३ - मेरा अनुभव

४५ - हिन्दी यू.एस.ए. की पाठशाला में पहला दिन

४६ - गाँधी जी

४७ - हमारा ग्रीष्मकालीन अवकाश

५० - बच्चों की कलम से

५५ - शब्द पहेली

५६ - बूझो तो जाने

संरक्षक

देवेंद्र सिंह

रूपरेखा एवं रचना

सुशील अग्रवाल

सम्पादकीय मंडल

देवेंद्र सिंह

माणक काबरा

अर्चना कुमार

राज मित्तल

अपनी प्रतिक्रियाएँ एवं सुझाव हमें अवश्य भेजें

हमें विपत्र निम्न पते पर लिखें

karmbhoomi@hindiusa.org

या डाक द्वारा निम्न पते पर भेजें:

Hindi USA
70 Homestead Drive
Pemberton, NJ 08068

आपके पत्र

श्री देवेन्द्र सिंहजी,

नमस्कार,

हमारी बहू सीमा अक्सर दूरभाष पर बातचीत के समय हिन्दी की चर्चा करतीं। हिन्दी प्रचार एवं प्रसार के लिए यहाँ इतना कार्य हो रहा है, यह सुन कर बहुत ख़ुशी मिलती। अब यहाँ आकर, जब हम हिन्दी पाठशाला में गए, तो इसकी एक झलक देखने को मिली। हिन्दी के ढेर सारे कार्य-क्रमों को चलाने के लिए आपको बहुत धन्यवाद और साधुवाद।

अभी करीब दिवाली तक यहाँ रहने का विचार है, इसी बीच अगर आपको सुविधा हो, तो मिलने की इच्छा है। नीचे हिन्दी पाठशाला में पहले दिन का अनुभव नामक ललित लेख है, आशा है आप उसका उचित उपयोग करेंगे.

आपका,

रामपाल अग्रवाल

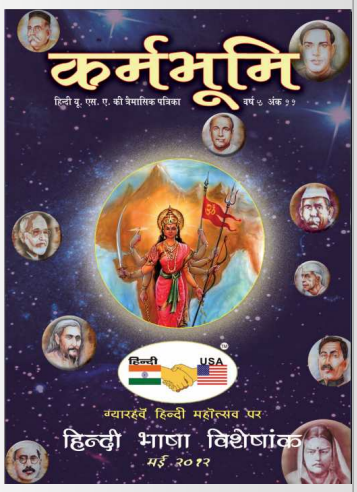

श्रद्धेय देवेन्द्र जी,

"कर्मभूमि" का "हिंदी भाषा विशेषांक" पढ़ने को मिला - हार्दिक धन्यवाद्। हिंदी यू.एस.ए. के माध्यम से अपने पिछले ग्यारह वर्षों में जिस प्रकार हिंदी भाषा की सेवा सुश्रुषा की है वह वास्तव में अभूतपूर्व है - इसके लिए मेरी शुभकामनायें व बधाई स्वीकार करें। आपने यह दिखा दिया है कि जन सहयोग से, बिना सरकारी सहायता के भी हिंदी की सेवा की जा सकती है, जिसकी आज बड़ी आवश्यकता है।

आपने ज्ञानार्जन, शिक्षण, साहित्य एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यमों से हिंदी, कैसे अमेरिका के प्रवासी भारतीयों के परिवारों से जोड़ी जाय, यह सब "कर्मभूमि" के माध्यम से कर के दिखाया है। इनमें 'अन्त्याक्षरी', कवि सम्मलेन और मुशायरा जैसे आयोजनों के विषय में भी सोचा जा सकता है, जिनके द्वारा मनोरंजन के साथ साहित्य सेवा भी हो जाती है। देवनागरी लिपि में उर्दू का प्रयोग आरंभ करने की भी आज आवश्यकता हो गई है, क्योंकि उर्दू को भ्रमवश मुसलमानों की भाषा मान लिया गया है, जबकि पंजाब में यह हिंदी से अधिक प्रचलित रही है। संस्कृत-निष्ट हिंदी दक्षिण में और उर्दू-निष्ट हिंदी उत्तर में खूब चलेगी। रविन्द्र अग्निहोत्री जी का सारगर्भित लेख "मोसे छल किए जाय" पढ़ा। जब भारत से पश्चिमी साम्राज्यवाद ने 1947 से पहले और उसके उत्तराधिकारी पश्चिमी वैश्विक सोच ने अब, पिछले 500 वर्षों से छल किया था, तब यह अपेक्षा थी कि स्वतंत्र भारत इस दिशा में सावधान होता, लेकिन ऐसा नहीं हुआ और उसकी कीमत अब इस पीढ़ी को चुकानी पड़ रही है। लेकिन जो हुआ सो हुआ, अब उसका इलाज होना

है। राजीव मल्होत्रा जी कि पुस्तक "Being Different" ने अब यह इलाज शुरू कर दिया है। यह इलाज लम्बा चलने वाला है और इसमें विश्व के जन मानस को भी जोड़ा जाना है, जिसके लिये आपकी हिंदी सेवा कारगर रहेगी। हम सब को उस दिशा में सोचना है। अग्निहोत्री जी के लेख में पृष्ट 19 के पहले प्रस्तर में देश के सभी भाषाओँ के 41 विद्वानों की समिति का उल्लेख है जिसने देश की सभी भाषाओँ के शब्द हिंदी में उपयोग हेतु संकलित किये थे। इसी प्रकार पृष्ट 21 पर "वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग" का उल्लेख है जिसने छह लाख पारिभाषिक शब्द बना लिये हैं। इन शब्दों का उपयोग कैसे बढ़ाया जाय, इस पर रविन्द्र अग्निहोत्री जी के सुझाव लिये जा सकते हैं। इन शब्दों का उपयोग व्यापार और व्यवहार में लाने के विषय में यदि एक निबंध प्रतियोगिता आयोजित हो सके तो शायद अच्छे सुझाव मिल सकते हैं।

व्यक्ति निर्माण और परिवार निर्माण की दो प्रकार की गतिविधियाँ आयोजित करने के लिये "जन्म दिवस - birthday party" और "शादी की सालगिरह - wedding anniversary" सभी भारतीय परिवार, अपने अपने स्तर पर केक काटने के समय पूरे परिवार द्वारा पांच बार गायत्री मंत्र का समवेत स्वर में उच्चारण कर, मना सकते हैं। जन्म दिवस के अवसर पर बालक अथवा बालिका कोई वार्षिक सरल सा व्रत (birthday resolution) लेने पर विचार करें जिस से अपना कोई दोष दूर हो जाय और शादी कि सालगिरह पर दम्पति अपने व्यक्तिगत और परिवारगत सुख के लिये योजना बनायें। भगवद्गीता के श्लोकों के वाचन की प्रतियोगिता के द्वारा इस अद्भुत शास्त्र को घर घर पहुँचाया जा सकता है।
तुलसीकृत रामचरितमानस का सस्वर पाठ भी बड़ा मनोरंजक होता है। वार्षिक हिंदी महोत्सव के आयोजन के अवसर पर सभी उपस्थित जन समूह इन सामूहिक पाठों में भाग ले सकते हैं। धर्मराज युधिष्ठर ने कहा था कि सलाह देना विश्व का सरलतम कार्य है, जो मैंने यहाँ किया, आशा है आप मुझे इसके लिये क्षमा करेंगे। मेरे द्वारा क्या सेवा हो सकती है, अवश्य बताएँ। सादर साभिवादन -
भवदीय,
जगदीश चन्द्र पन्त

जगदीश जी

आपके उत्साहवर्धन के लिए धन्यवाद। नि:स्वार्थ यज्ञ के सफल होने की संभावना अधिक रहती है, और हिंदी यू.एस.ए. के कार्य में भी संभवत: ऐसा ही हुआ है।

हम प्रतिवर्ष हिंदी महोत्सव में कवि सम्मेलन का भी आयोजन करते आ रहे हैं। आपके सभी सुझावों (उर्दू को छोड़कर) को हम कार्यांवित करने का प्रयास करेंगे। मुझे लगता है कि यदि किसी विषय को उजागर करने के लिए हमारे पास हिंदी या संस्कृत के शब्द उपलब्ध हैं तो हमें दूसरी भाषा के शब्द नहीं लेने चाहिए।

देवेंद्र (संरक्षक)

हिंदी हमारी पहचान है

हिंदी महोत्सव

रचिता सिंह

मई १९ और २० को मोनरो मिडिल स्कूल में हिन्दी यू.एस.ए. ने अपना ग्यारहवाँ हिन्दी महोत्सव बहुत ही धूमधाम से मनाया। विदित है कि हिन्दी यू.एस.ए. एक स्वयंसेवी संस्था है जो पिछले बारह वर्षों से हिन्दी प्रचार प्रसार में लगी है। इस देश में जन्मी भारतीय पीढ़ी अपनी भाषा से वंचित न रह जाए इसलिए यह संस्था अमेरिका के अनेक प्रान्तों में, विशेषकर न्यूजर्सी में, अनेक हिन्दी पाठशालाएँ चला रही है। इन पाठशालाओं में ९ स्तरों के पाठ्यक्रम तथा विदेशी विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से बनाई गयी पुस्तकों द्वारा विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान की जाती है। हिन्दी यू.एस.ए. के शिक्षक प्रत्येक स्तर के लिए विभिन्न प्रकार के खेल तथा शिक्षण-सामग्री का प्रयोग करते हैं। ये विद्यार्थी प्रतिवर्ष मौखिक तथा लिखित परीक्षा पास करके अगले स्तर में जाते हैं। हिन्दी यू.एस.ए. की ये विशेषताएँ इसे अन्य हिन्दी कक्षाओं से अलग करती हैं।

हिन्दी के विद्यार्थियों में नेतृत्व की भावना, भारत के प्रति प्रेम, हिन्दू संस्कृति के प्रति प्रेम तथा जागरूकता को जगाने और बढ़ाने के लिए हिन्दी यू.एस.ए. प्रतिवर्ष हिन्दी महोत्सव का विशाल आयोजन करता है। इस महोत्सव की यह विशेषता है कि इसमें ५ साल से लेकर १८ साल तक के बच्चे भाग लेते हैं। इसमें हिन्दी न बोल पाने वाले विद्यार्थियों से लेकर बहुत अच्छी हिन्दी बोलने, लिखने, और पढ़ने वाले विद्यार्थी एक ही मंच पर अपने-अपने स्तर के कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं। यह कार्यक्रम केवल विद्यार्थियों के लिए ही नहीं अपितु शिक्षकों और अभिभावकों के लिए भी चुनौती भरा कार्यक्रम होता है।

हिन्दी महोत्सव एक ऐसा कार्यक्रम है जिसमें बॉलीवुड के बदले भारतीय संस्कृति, इतिहास, देश प्रेम, तथा नई पीढ़ी की समस्याओं की झलक नृत्यों, नाटकों, गीतों, नृत्य-नाटिकाओं, प्रतियोगिताओं, आदि के माध्यम से देखने को मिलती है।

ग्यारहवें हिन्दी महोत्सव के प्रथम दिन बच्चों के रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम सुबह ठीक १०:३० बजे सरस्वती वन्दना के साथ जो प्रारम्भ हुए तो यह सिलसिला संध्या ७ बजे तक अविरल चलता रहा। जिन कुल ५,००० दर्शकों ने १,५०० बच्चों को निरंतर

समय और नियम में बंधकर यह कार्यक्रम करते देखा तो उन्हें ऐसा लगा मानो हिन्दी की पवित्र अविरल सरिता धारा न्यूजर्सी में उतर आई हो। कोई भी बिना प्रशंसा किए न रह सका। अभिभावकों का जोश अपने नौनिहालों की हिन्दी सुनकर चरम सीमा पर पहुँचा हुआ था। शिक्षक-शिक्षिकाएँ तथा सभी कार्यकर्ता और स्वयंसेवक अपने विद्यार्थियों की सफलता और प्रगति से अत्यधिक प्रसन्न और उत्साहित दिख रहे थे।

जिन कुल ५,००० दर्शकों ने १,५०० बच्चों को निरंतर समय और नियम में बंधकर यह कार्यक्रम करते देखा तो उन्हें ऐसा लगा मानो हिन्दी की पवित्र अविरल सरिता धारा न्यूजर्सी में उतर आई हो।

बच्चों के कार्यक्रम के साथ-साथ दर्शकों ने हिन्दी महोत्सव के भोजन, चाट, तथा पीज़ा का भी पूरा-पूरा आनंद उठाया। महोत्सव के सभी स्टॉलों पर अभिभावकों ने खरीददारी कर के मेले जैसा वातावरण बना दिया था। सबसे ज्यादा भीड़ बच्चों की कहानियों की पुस्तकों के स्टॉल पर रही। सभी दर्शकों को हिन्दी यू.एस.ए. की त्रैमासिक पत्रिका 'कर्मभूमि' उपहार स्वरूप दी गयी।

मई २० को महोत्सव का दूसरा दिन भी बच्चों की फाइनल कविता प्रतियोगिता से प्रारंभ हुआ जिसमें सभी स्तरों के ७५ विद्यार्थियों ने भाग लिया। लगभग १:३० बजे यह प्रतियोगिता समाप्त हुई तथा विजेताओं को पुरुस्कृत किया गया। जिन लोगों ने इन प्रतियोगिताओं को सुना वे अपने कानों पर विश्वास नहीं कर पाए कि अमेरिका के बच्चे भी इतनी लंबी और कठिन कविताएँ इतने सुन्दर उच्चारण और हाव-भाव के साथ सुना सकते हैं।

इसके बाद कार्यक्रम के विशेष अतिथि श्री नारायण कटारिया जी को सम्मानित किया गया तथा उनका प्रेरित उद्बोधन हुआ। उनके बाद कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. राजीव मल्होत्रा जी ने लगभग १ घंटे अपने उद्बोधन में अपनी नई पुस्तक 'बीइंग डिफरेंट' के बारे में बताया।

उद्बोधन के बाद अनेक श्रोताओं ने डॉ. मल्होत्रा के ऑटोग्राफ के साथ उनकी नई पुस्तक खरीदी। डॉ. मल्होत्रा को मंत्रमुग्ध होकर सुनने के बाद अब श्रोताओं को प्रतीक्षा थी हास्य कवि सम्मलेन की। तभी कार्यक्रम के संयोजक श्री देवेन्द्र सिंह ने मंच पर आकर कवि सम्मलेन आरम्भ करने की घोषणा की तथा सभी कवियों को उनके भव्य परिचय के साथ मंच पर आमंत्रित किया तथा कवि सम्मलेन के संचालन की डोर सियाटल से पधारे श्री

अभिनव शुक्ल जी के हाथों में थमा दी। डोर हाथ में आते ही अभिनव जी ने अपनी कविताओं और चुटकुलों की पतंगें उड़ाना आरंभ कर दिया। और फिर उनका साथ दिया डॉ. वागीश दिनकर और मुम्बई से पधारे महेश दुबे ने। कवि सम्मलेन का पहला दौर कब समाप्त हो गया श्रोताओं के ठहाकों और तालियों के बीच पता ही नहीं चला। श्रोताओं की विशेष माँग पर कवियों ने अपनी चुनी हुई कविताओं का दूसरा दौर प्रारम्भ किया। समय अधिक हो गया था, फिर भी श्रोता मंत्रमुग्ध कवि सम्मलेन सुनते रहे। कवि सम्मलेन के दौरान अभिनव शुक्ल जी की पुस्तक 'पत्नी चालीसा' का विमोचन तथा देवेन्द्र सिंह द्वारा काव्य पाठ भी हुआ जिसमें उन्होंने श्रोताओं से हिन्दी के अभियान से जुड़ने की तथा हिन्दी भवन के लिए राशि एकत्र करने की अपील की।

कार्यक्रम के अंत में सभी कवियों को हिन्दी यू.एस.ए. ने प्रशस्ति पत्र द्वारा प्लैक देकर सम्मानित किया। इस प्रकार हर महोत्सव की भाँति यह महोत्सव भी एक मधुर स्मृति बन गया।

ग्यारहवाँ हिन्दी महोत्सव – कुछ झलकियाँ

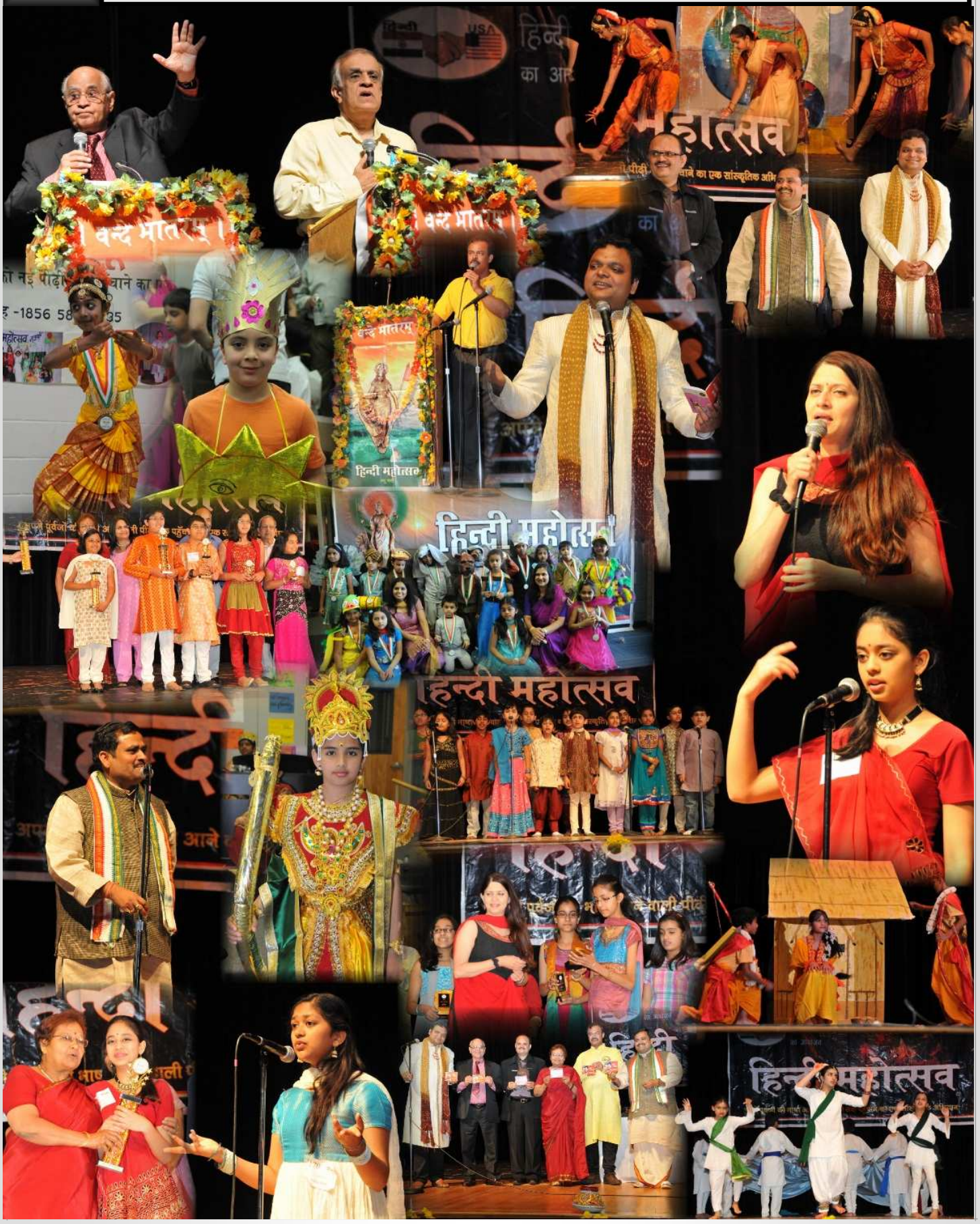

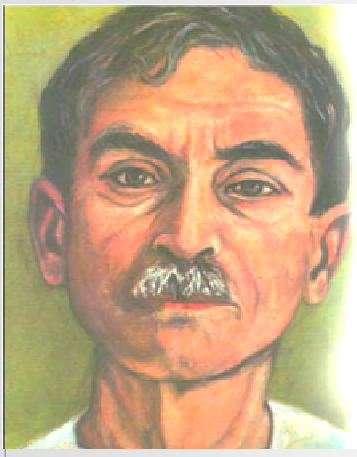

मुंशी प्रेमचंद और भारतीय राजनैतिक संविधान

पार्थ परिहार

सब जानते हैं कि मुंशी प्रेमचंद २०वीं शताब्दी के भारत के सबसे प्रमुख एवं सम्माननीय सामाजिक समीक्षक थे। उनके उपन्यास एवं कहानियाँ सामाजिक टिप्पणियों से भरपूर हैं-- विषय अनेक हैं: ब्रिटिश राज, भारतीय ग्राम, तथा हिन्दुस्तानी परम्पराएँ इस सूची में सम्मिलित हैं। मुंशी प्रेमचंद जी हिन्दी साहित्य के सरताज हैं, और इसके आधार पर उनके बारे में बहुत लिखा गया है। मैं ना ही साहित्यकार हूँ, ना ही हिन्दी भाषा का श्रेष्ठ लेखक, ना ही समाज का पूर्व ज्ञानी, किन्तु मुझे यह लगता है कि हमने एक अहम प्रश्न पर गौर ना करके, मुंशी प्रेमचंद को आज की दुनिया से बाहर, और उनकी पुस्तकों के पन्नों में कैद करके रख दिया है। वह सवाल यह है कि यदि मुंशी प्रेमचंद आज जीवित होते, तो वे २१वीं शताब्दी के भारत के बारे में क्या लिखते? इस प्रश्न के उत्तर की खोज में मैंने उनकी चंद कहानियों को पढ़कर, उनके विचारों से एक उत्तर को रूप देने का नम्र प्रयत्न आरम्भ किया है।

यदि मुंशी प्रेमचंद आज जीवित होते तो २१वीं शताब्दी भारतीय समाज के बारे में क्या लिखते?

मुंशी प्रेमचंद को मैंने पहली बार भारतीय रेल पर, और मशहूर कहानी 'कफ़न' के रूप में, पढ़ा। उसके और इस खोज के बीच, मैंने उनकी कोई रचनाएँ नहीं पढ़ीं, किन्तु 'मानसरोवर' को खोलते ही, मैंने मुंशी प्रेमचंद के लेखन के बारे में दो तत्व समझे। एक यह कि उनका लेखन समझने में अत्यंत सरल है (मुझ जैसे मूर्ख भी उनकी कहानियों का आनंद उठा सकते हैं), और दूसरा यह कि वे व्यंग्य और प्रतीकवाद दुनिया की किसी भी भाषा के किसी भी लेखक से कम कुशलता से नहीं उपयोग करते। मैं उनके लेखन की प्रशंसा में स्याही की लाखों बोतलों को अपनी कलम से खाली कर सकता, किन्तु ना ही मैं इस योग्य हूँ, और ना हीं ये मेरा इस गद्य को लिखने का उद्देश्य है।

इस गद्य में मैं भारतीय राजनैतिक और सरकारी संविधान के विषय को मुंशी प्रेमचंद की दृष्टि से देखने का प्रयास करूँगा। इस विषय पर

लिखने की वजह है वर्तमान में एक ऐसा वातावरण जो इस संविधान पर उँगली उठा रहा है, और इससे कठिन प्रश्न पूछ रहा है। अन्ना हजारे और बाबा रामदेव की लड़ाई भ्रष्टाचार और काले धन के विरुद्ध भले हो, लेकिन वे संविधान की पारदर्शकता की कमी पर बड़े सवाल खड़े करते हैं। इसके कारण भारतवासियों का अपने राजनैतिक संविधान के ऊपर भरोसा शून्य से भी घटता जा रहा है। प्रेमचंद इसके बारे में क्या कहते? - इस सवाल का एक उत्तर हमें उनकी कहानी 'आदर्श विरोध' में मिलता है।

'आदर्श विरोध' लखनऊ के सुविख्यात वकील महाशय दयाकृष्ण मेहता की कहानी है, जिसमें उन्हें ब्रिटिश वाइसराय की कार्यकारिणी सभा का सदस्य नियुक्त किया जाता है। किन्तु कहानी की घटनाओं के कारण उनके जीवन का यह "मधुर स्वप्न" उनके लिए एक डरावना श्राप बन जाता है। कहानी के आरंभ में प्रेमचंद महाशय दयाकृष्ण को "सहृदय बंधु," "निर्भय तत्वान्वेषी," तथा "निस्पृह समालोचक" जैसे शीर्षकों से अलंकृत करते हैं। स्पष्ट है कि दयाकृष्ण प्रजा की भावनाओं और समस्याओं को निकटता से समझते और अपने नए व्यवसाय से उन्हें हल करने की आशा रखते हैं। कहानी के चलते प्रेमचंद हमें दयाकृष्ण तथा अन्य पात्रों के द्वारा सामाजिक बातों पर सोचने के लिए मजबूर कर देते हैं।

इसका सबसे अच्छा उदाहरण है वह बात-चीत जो दयाकृष्ण अपनी पत्नी राजेश्वरी के साथ करते हैं। दयाकृष्ण कार्यकारिणी के सैनिक मेंबर से मिलने के बाद अपनी पत्नी से कौंसिल के बारे में वार्तालाप करते हैं। दयाकृष्ण पहले कहते हैं,

"[भारत-निवासी] ये समझते हैं कि हिन्दुस्तानी मेंबर कौंसिल में आते ही हिन्दुस्तान के स्वामी हो जाते हैं और जो चाहें स्वच्छंदता से कर सकते हैं। आशा की जाती है कि वे शासन की प्रचलित नीति को पलट दें, नया आकाश और नया सूर्य बना दें। उन सीमाओं पर विचार नहीं किया जाता है जिनके अंदर मेम्बरों को काम करना पड़ता है।"

तेज पाठक यह व्याख्या कर सकता है कि यह वर्णन लोकपाल के मामले का एक स्वरूप है। जनता चाहती है कि सरकार झट से मजबूत लोकपाल संविधान ले आये, किन्तु कांग्रेस की सफाई यह है कि उन्हें संसद के नियम-कायदों, कानूनिक व्यवस्था, एवं मर्यादाओं के अंदर काम करना पड़ता है। (आप यदि कांग्रेस की बातों पर विश्वास न करें, तो मैं आपको दोष नहीं दूँगा!)

राजेश्वरी यह सब सुनकर बोलती हैं कि यदि कौंसिल के आधे मेंबर हिन्दुस्तानी हैं तो क्या वे अपने देश के हित में नीतियों को बदल नहीं सकते? दयाकृष्ण उत्तर देते हैं कि उनकी राय का कौंसिल की नीति पर असर हो सकता है, किन्तु "उस नीति में परिवर्तन नहीं किया जा सकता... [हिन्दुस्तानी मेंबर] कैसे भूल जावें कि कौंसिल में उनकी उपस्थिति केवल सरकार की कृपा और विश्वास पर निर्भर है। ... यहाँ वस्तुतः उनकी स्वाधीनता नष्ट हो जाती है। ... सरकार की नीति को हानिकारक समझते हुए भी उसका समर्थन करते हैं।"

इतने में ही हमें दो बात स्पष्ट: दिखाई देती हैं। एक यह कि संविधान प्राय: लोगों की चाहत से धीरे काम करता है। आज की दुनिया में हर लोकतांत्रिक संविधान में ऐसे प्रावधान हैं जो अल्पमत, राज्यों, अन्यथा के अधिकार की सुरक्षा करते हैं, किन्तु इससे क़ानून बनाने की विधि में और भी कठिनाइयाँ आती हैं। लेकिन यह वह दाम है जो हम लोकतंत्र के लिए अपनी जेब से देते हैं। हाँ, यदि सीमाओं को धुएँ की तरह सरकार की नियत को छुपाने का उपयोग किया जाए, तो यह प्रेमचंद की राय में लोकतंत्र की हार होगी। दूसरी बात और गंभीर और विशेष है कि जो लोग सरकार का हिस्सा

होते हैं, उनके पद के पीछे किसी बड़े अधिकारी का हाथ होता है। प्रेमचंद के मन में, इस प्रकार से, बहुत सारी समस्याएँ सामने आती हैं।

आज की दुनिया में इस विचारधारा को कई दिशाओं में विस्तृत किया जा सकता है। एक अहम सवाल रहा है "क्या सी.बी.आई. को लोकपाल के दायरे में आना चाहिए?" प्रेमचंद का उत्तर होता "हाँ।" सी.बी.आई. के किसी दूसरी एजेंसी के पर्यवेक्षण के बिना सी.बी.आई. होम मिनिस्ट्री को अपनी स्वतंत्रता सौंप देता है। इसके अफसर के करियर और नौकरी मिनिस्ट्री के विश्वास और मंगल-भावना पर पूर्ण तरह से निर्भर होते हैं, ठीक उसी तरह जिस तरह महाशय दयाकृष्ण की कौंसिल में उपस्थिति ब्रिटिश के "कृपा और विश्वास" पर निर्भर थी। इस दोष के कारण जो एक ओर नीति में सुधार नहीं संभव था, तो दूसरी ओर सी.बी.आई. सरकार की जाँच नहीं कर सकता।

लोग कहते हैं कि हर नेता बेईमान और भ्रष्ट होता है, किन्तु मैं यह नहीं मानता। राजनीति और सरकार चलाने में ईमानदार लोगों का भी हाथ है, किन्तु यह हाथ बंधे हैं, भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाजें दबी हैं क्योंकि उनके जीवन का मुख्य हिस्सा पार्टी अध्यक्ष, प्रधान-मंत्री या मुख्य-मंत्री, आदि अध्यक्षों पर निर्भर है। इस कारण वे उनका विरोध नहीं करेंगे। कहानी में स्वयं प्रेमचंद ने इसे लोकोक्ति "नमक की खान में जो कुछ जाता है, नमक हो जाता है" लोकोक्ति का स्वरूप दिया है। ये बात कांग्रेस में स्पष्ट दिखाई देती है, अन्यत: यदि हम उत्तराखंड का उदाहरण लें-- तो जब भ्रष्ट पोखरियाल को भाजपा ने मुख्य-मंत्री की कुर्सी से निकाल दिया, तभी खंडूरी की सरकार ने उस प्रदेश में जन लोकपाल कानून को पारित किया। सरकार के दूसरे लोग अब निर्णय पोखरियाल के हाथों उनके करियर की बलि की संभावना के बिना ले सकते थे।

राष्ट्रीय स्तर पर भी, यह दोष संसद के प्रतिनिधियों को जनता की आवाज से पार्टी की आवाज में बदल देता है। क्योंकि पार्टी इन प्रतिनिधियों को टिकट देती है, वे पार्टी पर निर्भर होते हैं, और महत्वपूर्ण विधानों पर इनकी मतें भी पार्टी की विचारधारा को तोते की तरह दोहराती हैं।

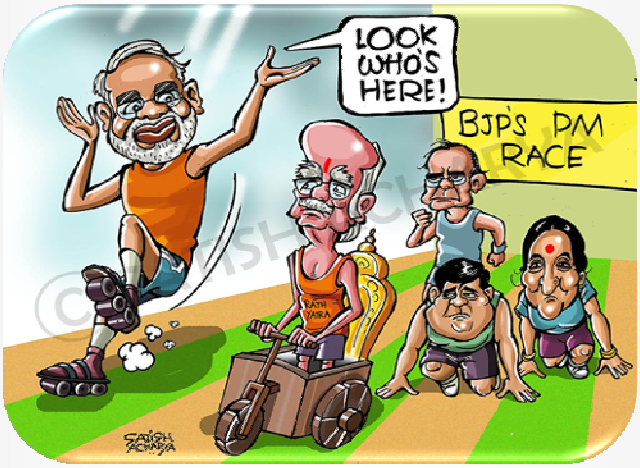

वे लोगों की या अपनी स्वयं की सोच पर मत नहीं दे पाते हैं, जो लोकतंत्र के मूल्य आधार के विपरीत है। एक और उदाहरण है वह प्रश्न कि क्या २०१४ (शायद २०१३) लोकसभा चुनावों में नरेन्द्र मोदी भाजपा के प्रधान-मंत्री के उम्मीदवार बनेंगे? यदि हम लोगों से पूछे, तो वे हाँ कहेंगे; नितीश कुमार, जिनका समर्थन भाजपा के लिए आवश्यक है, से पूछें, तो जवाब नहीं

होगा। ये महाशय दयाकृष्ण की समस्या के जैसे हैं। प्रेमचंद इस समस्या के समाधान के लिए चुनाव में हर दल के उम्मीदवारों का चुनाव भी जनता से करवाने का सुझाव देते। यह संविधान अमेरिका में १९१० से लेकर १९३० में उपयुक्त हुआ, जिसके कारण पार्टी के आपसी झगड़े और मत-भेद, सरकारी मामलों में भारत के मुकाबले में नहीं रहे हैं। देखा जाए तो यह पार्टियों के लिए भी अच्छा है क्योंकि यदि वे जनता से चुने हुए उम्मीदवारों को चुनाव में टिकट देंगे, तो उनकी उस पद को जीतने की संभावना दुगनी हो जायेगी।

अपनी पत्नी से बातें करने के बाद, दयाकृष्ण व्यवसाय मंडल के जलसे में जाते हैं। वहाँ सभापति जब अपने भाषण में सरकार को शिल्प-कलाओं की आर्थिक रक्षा करने का सुझाव देते हैं, तो दयाकृष्ण विवाद करते हैं। वे उत्तर देते हैं,

"आपके सिद्धांत निर्दोष हैं, किन्तु उनको व्यवहार में लाना नितांत दुस्तर है। ... व्यावसायिक कार्यों में अग्रसर बनना जनता का काम है। आपको स्मरण करना चाहिए कि ईश्वर भी उन्हीं की रक्षा करता है जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं।... पग-पग पर सरकार के सामने हाथ फैलाना अपनी अयोग्यता और अकर्मण्यता की सूचना देना है।"

लेकिन क्या प्रेमचंद दयाकृष्ण से सहमत हैं? कहानी में प्रेमचंद जनता की हर बात पर राय देने की परम्परा को नटखट प्रकार से छेड़ते हैं। दयाकृष्ण की हर बात के बाद, तीन दल अलग-अलग टिप्पणी देते हैं। किन्तु दयाकृष्ण के वक्तृता के बाद, समाज के *तीनों दल* उनसे असंतुष्ट हैं, हालांकि उनकी टिप्पणियों और शब्दों के तीखेपन में अंतर है। यह इस बात का प्रतीक है कि प्रेमचंद सरकार का अपनी प्रजा का हाथ बटाने के सिद्धांत में विश्वास रखते हैं। प्रजा की रक्षा बेरोजगारी और निर्धनता से भी हो सकती है, और इस कमी को हटाने के लिए सरकार को स्वयं आर्थिक सहायता तथा सामाजिक परियोजनाओं को बनाने का उत्तरदायित्व भी है। दयाकृष्ण स्वयं कहते हैं, "शासन का प्रधान कर्तव्य भीतर और बाहर की अशान्तिकारी शक्तियों से देश को बचाना है।" प्रेमचंद के लेखों से यह स्पष्ट है कि वह आर्थिक समस्याओं को समाज के सबसे हानिकारक "अशान्तिकारी शक्ति" मानते थे। हम इस सिद्धांत को अमेरिका में देख सकते हैं। जब अमेरिका की अर्थव्यवस्था में २००८ का भूकंप आया, तो ओबामा ने 'स्टिमयूलस' के माध्यम से बेरोजगारी को कम एवं खरीददारी को अधिक करने का प्रयत्न किया। इस नीति के कुछ स्वादिष्ट फल हम चख चुके हैं।

सरकार की उचित नीतियों के दूसरे पहलू में सेना का अधिकारी कॉक जब दयाकृष्ण से मिलता है, तो वह उनको सेना के लिए और पैसे नियुक्त करने के लिए तैयार करते हैं। किन्तु इस बात से जनता उनसे और भी नाराज हो जाती है-- जो पैसा व्यवसाय मंडल को जा सकता था, वह हिन्दुस्तानी हाथों से ब्रिटिश शासन को जा रहा है? कुछ हद तक, जब सरकार बजट बनाती है तो वह पैसों को "मक्खन" (सामाजिक परियोजनाओं, जनता की आर्थिक मदद) में और "बंदूकों" (सेना) में बाँटती है। कहा जा सकता है कि प्रेमचंद का मानना है कि विदेशी आक्रमण न होते हुए पैसों का वितरण "मक्खन" में अधिक और "बंदूकों" में कम होना चाहिए।

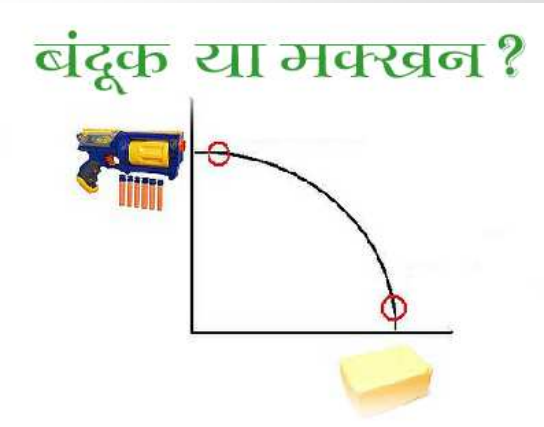

दयाकृष्ण की बातों से न केवल जनता, अपितु उसका बेटा बालकृष्ण भी, निराश और गुस्सा हुआ। सब यही मानते थे कि दयाकृष्ण जैसे समाज-सेवी को कौंसिल में भेजकर, उन्होंने दयाकृष्ण के उसूलों को फांसी के फंदे पर चढ़ा दिया हो। वह अब ब्रिटिश सरकार के आधीन था। बालकृष्ण और दयाकृष्ण के बीच तीखे शब्दों की वार होती है, यहाँ तक बालकृष्ण अपने पिता की निंदा एक पत्रिका में करता है। बालकृष्ण को लन्दन में भारतीय युवाओं और नेताओं की एक सभा में अपने पिताजी के कारण घोर अपमान सहन करना पड़ता है। इसके बाद, बालकृष्ण सभा को छोड़ देते हैं, और उनकी लाश कमरे में मिलती है इन शब्दों के साथ-- "आज सभा में मेरा गर्व दलित हो गया। मैं यह अपमान नहीं सह सकता। मुझे अपने पूज्य पिता के प्रति ऐसे कितने ही निंदासूचक दृश्य देखने पड़ेंगे। इस आदर्श-विरोध का अंत ही कर देना अच्छा है। संभव है, मेरा जीवन उनके निर्दिष्ट मार्ग में बाधक हो। ईश्वर मुझे शक्ति दे।"

बहुत दु:ख की बात है कि विचारधारा में बदलाव लाने के लिए ऐसी खेदजनक घटनाओं को प्राय: घटना पड़ता है। प्रेमचंद का अंतिम सन्देश हमें सदा स्वाधीन रहने का है-- किसी की बातों में आकर निर्णय लेना उचित ही नहीं, अपितु समाज के लिए हानिकारक भी हो सकता है। इसीलिए जनता और सरकार के बीच जो दरारें आयीं हैं, उन्हें मिटाना भारतीय संविधान के लिए आवश्यक है, नहीं तो दुर्भाग्यतापूर्ण देश इस प्रकार उन्नति नहीं कर पायेगा।

हिंदी सीखने का मेरा अनुभव

अपूर्वा नविन

मेरा नाम अपूर्वा नविन है। मैं बारह साल की हूँ और सातवीं कक्षा में पढ़ती हूँ। मैं एडिसन में रहती हूँ और पिस्कैटवे हिंदी पाठशाला में उच्च स्तर -२ में पढ़ती हूँ। मेरे परिवार में चार लोग हैं। मैं, मेरे माता-पिता और छोटे भाई के साथ रहती हूँ।

हिन्दी सीखने का मेरा अनुभव बहुत अच्छा था और मैंने बहुत कुछ सीखा है। पहले हमने स्वर और व्यंजन सीखे और बाद में गिनती सीखी। उसके बाद शब्दों और वाक्यों को पढ़ने और कविताओं के बारे में जाना। अब हम निबंध लिखना सीख रहे हैं। कुल मिलाकर हिन्दी एक चुनौती वाला पर मजेदार विषय है।

अच्छा या सही

देवेंद्र सिंह

बहुत से लोगों में यह भ्रम है कि अच्छा व्यक्ति होने से ही विश्व सुधर जाएगा। वे किसी की बुराई किए अथवा किसी से बैर या लड़ाई किए बिना अपना जीवन गुजारते हैं, और भगवान की पूजा-अर्चना कर अपना मन व चरित्र निर्मल रखते हैं। यह जीवन जीने की बहुत अच्छी शैली है, और एक प्रकार से अनुकरणीय भी है।

परंतु यह आवश्यक नहीं है कि अच्छा व्यक्ति सदैव सही काम ही करे। हमारे समाज में अधिकतर अच्छे व्यक्ति किसी सही परियोजना में संलग्न नहीं हैं, और न ही वे इसकी चाह रखते हैं। उन्हें लगता है कि उनके अच्छे बने रहने से समाज की व्यवस्था सुचारू रूप से चलती रहेगी। यहाँ केवल सही राय या उपदेश देना 'सही होने' में सम्मिलित नहीं है।

अच्छे व्यक्ति को सही कार्य या परियोजना में अपनी निष्काम सेवाएँ देना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि ऐसा नहीं करने से बुरे व्यक्ति समाज को नकारात्मक रूप से नियंत्रण में कर लेते हैं। यदि बुरा व्यक्ति सही कर्म करे, तो वह अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ है, जो सही काम का नेतृत्व या उसमें अपना सकारात्मक योगदान नहीं देता। इसलिए अच्छे के साथ-साथ सही व्यक्ति बनना अति आवश्यक है।

यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है कि सही कार्य की परिभाषा क्या होती है, अथवा यह निर्णय कौन करेगा कि कथित विशेष कार्य ही सही है। इस प्रश्न का उत्तर अलग-अलग व्यक्ति अपने आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विकास के अनुसार देंगे। परंतु सामान्य तौर पर सही कार्य दो स्त्रोतों द्वारा परिभाषित किए जा सकते हैं:

- शास्त्रों के अध्ययन से
- कार्य के प्रभाव क्षेत्र से

भ्रम या संदेह की स्थिति में हिंदू शास्त्रों के सहारे से सही कार्यों का चयन किया जा सकता है, और बुरे कार्यों को त्यागा जा सकता है। कभी-कभी छल कपट या नीति-विरोधी लगने वाले कार्य भी सही हो सकते हैं, यदि उन्हें उनके उपयुक्त परिपेक्ष में देखा जाए तो। जैसे यदि भगवान राम का बाली को मारना या श्री कृष्ण का जयद्रथ को मरवाने का अध्ययन उनकी पूरी पृष्ठभूमि के साथ किया जाए, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि ये कार्य न केवल सही थे, बल्कि पूरे समाज के लिए आवश्यक भी थे। जैसे चिकित्सक शल्य चिकित्सा में रोगी

अच्छा या सही

पर हिंसा करते हुए प्रतीत होता है, परंतु यह हिंसा सकारात्मक है, क्योंकि इसमें मरीज का ही लाभ है। यहाँ महत्वपूर्ण है कि सही कार्य से सदैव समाज का ही लाभ होना चाहिए। यदि किसी कार्य से केवल व्यक्तिगत लाभ ही होता है, तो वह सही कार्य नहीं हो सकता।

कार्य के प्रभाव क्षेत्र से भी कार्य के सही या गलत होने को आँका जा सकता है। यदि कार्य से केवल स्थानीय लाभ तो होता प्रतीत होता है, परंतु कोई सार्वभौमिक प्रभाव होता नहीं दिखाई देता, तो वह कार्य पूर्ण रूप से सही या लाभकारी नहीं माना जाएगा। जैसे बॉम्बे को मुंबई करवाने में अधिक ध्यान देना, परंतु इंडिया को भारत में बदलने के प्रति उदासीनता या उपेक्षा का भाव रखना पूर्णतया सही कार्य नहीं है। इसी प्रकार अपनी जाति या प्रदेश के लिए तो सक्रिय रूप से कार्य करना, परंतु जाति-प्रथा के उन्मूलन के लिए कार्य करने और देश के हित को अपने प्रदेश के हित से ऊपर रखने के प्रति केवल दिखावटी बातें करना सही नहीं माना जाएगा।

इसलिए इस लेख के संदेश से सही कार्य को समझाने के लिए चार लक्षणों का विवरण दिया जा सकता है:

1. अच्छा और सही व्यक्ति - यह आदर्श स्थिति है, और इसे ही हमें अपने चरित्र में स्थापित करना चाहिए।
2. बुरा व्यक्ति और सही कार्य - जब व्यक्ति बुरा होकर भी समाज के लिए अच्छा कार्य करता है, तो वह कार्य चाहे उपरोक्त कार्य जैसे पूरी तरह से शुद्ध न हो, परंतु समाज या व्यक्ति के लिए लाभकारी हो सकता है। जैसे यदि कोई डाकू बैंक को लूट कर पूरा धन निर्धनों में वितरित कर दे, तो वह कार्य इस श्रेणी में आएगा।
3. अच्छा व्यक्ति परंतु सही कार्य नहीं - समाज के अधिकतर व्यक्ति इस श्रेणी में आते हैं, परंतु ये अपना जीवन सही कार्यों में न लगाकर नष्ट कर रहे हैं। भगवद् गीता व्यक्तियों को अच्छे कार्य करने की शिक्षा देने हेतु ही लिखी गई है।
4. बुरा व्यक्ति और बुरा कार्य - इस श्रेणी में अधम और गिरे हुए लोग आते हैं, जिनमें भारत के अधिकांश राजनीतिज्ञ सम्मिलित हैं। इस श्रेणी को किसी भी मूल्य पर त्यागना चाहिए।

प्रत्येक व्यक्ति का प्रयास होना चाहिए कि वह अपने को पहली श्रेणी में लाने का सक्रिय प्रयास करे। इससे समाज का लाभ तो होगा ही, परंतु साथ ही साथ हमारे कर्मफल हमें प्रभावित नहीं करेंगे, और परिणामस्वरूप हम अपने जन्म-मरण के प्रक्रम के चक्र को रोकने में सफल होंगे। हिंदू शास्त्रों के अनुसार यही हमारे जीवन का उद्देश्य होना चाहिए।

अपनी भाषा से भेद क्यों?

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

आस्ट्रेलियाई सरकार ने कहा है कि भारत जानेवाले उसके राजनयिकों को हिंदी सीखने की जरूरत नहीं है, क्योंकि वहाँ सारा काम-काज अंग्रेजी में होता है। प्रधानमंत्री जूलिया गिलार्ड ने तो यहाँ तक कहा है कि "भारत एक अंग्रेजीभाषी लोकतंत्र है।" आस्ट्रेलिया के विदेशी मामलों के एक प्रमुख विशेषज्ञ इयान हाल ने अपनी सरकार को सलाह दी थी कि भारत में नियुक्ति किए जानेवाले राजनयिकों को हिंदी इसलिए भी सिखाई जाए कि ऐसा करने से भारत का सम्मान होगा। जब जापान, चीन, कोरिया, इंडोनेशिया, ईरान और तुर्की जैसे देशों में भेजे जानेवाले राजनयिकों को उन देशों की भाषा सीखना अनिवार्य है तो भारत की उपेक्षा क्यों? इस पर आस्ट्रेलिया के विदेश व्यापार सचिव का कहना था कि जब भारत ही अपना सारा काम-काज अंग्रेजी में करता है तो आस्ट्रेलियाई राजनयिकों को क्या पड़ी है कि वे हिंदी सीखें?

बात तो ठीक ही मालूम पड़ती है। विदेशी राजनयिकों का दायरा बहुत सीमित होता है। उनका ज्यादातर काम हमारे बड़े बाबुओं से पड़ता है। भारत सरकार में अंग्रेजी पढ़े बिना कोई बाबू बन ही नहीं सकता। विदेशी राजनयिकों का दूसरा बड़ा संपर्क राजधानी के पत्रकारों से होता है। वे अंग्रेजी अखबारों को पढ़ते हैं और उन्हीं के पत्रकारों से संपर्क रखते हैं। हिंदी व अन्य भाषाओं के पत्रकारों से उनका संपर्क नगण्य होता है। कुछ महत्वपूर्ण देशों के राजदूतों का संपर्क हमारे विदेश मंत्री तथा अन्य नेताओं से भी होता है। ये नेतागण भी टूटी-फूटी अंग्रेजी में अपनी बात कह लेते हैं और अब तो हमारे कई बड़े नेता शुद्ध बाबू ही हैं। वे अंग्रेजी में ही अधिक सलीके से बात कर पाते हैं। इसीलिए विदेशी राजनयिक भारतीय भाषाओं पर मगजपच्ची क्यों करें? और सबसे बड़ी बात यह है कि ज्यादातर विदेशी राजनयिक भी तो बाबू लोग ही होते हैं। बाबू का काम मक्खी पर मक्खी बिठाना है। अफसरों,पत्रकारों और नेताओं से मिलकर अपने विदेश मंत्रालय को रपट भेजकर वे छुट्टी पा जाते हैं। उनका काम वे यह नहीं मानते कि उनके अपने देश और भारत के लोगों के आपसी संबंध मजबूत बनें, एक-दूसरों को पारस्परिक जीवन की ज़रा गहरी जानकारी मिले और एक-दूसरे की संस्कृति के प्रति गहरा सम्मान पैदा हो।

यदि विदेशी राजनयिकों में यह दूसरा भाव हो तो वे जिस देश में नियुक्त होते हैं, सबसे पहले उसकी भाषा सीखेंगे। भाषा वह पगडंडी है, जो सीधे लोगों के दिलों तक जाती है। यदि आप लोगों की भाषा नहीं समझते तो आप लोगों को भी नहीं समझ सकते। क्या आपने कभी सोचा कि अमेरिका

जैसे महाबली राष्ट्र ने वियतनाम में मार क्यों खाई, ईराक़ में वह क्यों फंस गया है, ईरान से वह फिज़ूल क्यों उलझ गया है, अफगानिस्तान से अपना पिंड क्यों नहीं छुड़ा पा रहा है? क्या वजह है कि अमेरिका और ब्रिटेन जैसे राष्ट्र अपने दूतावासों पर करोड़ों डॉलर खर्च करके भी अंधेरे में ही लट्ठ चलाते रहते हैं। कई देशों में तख्ता-पलट हो जाता है और कइयों में आम जनता बगावत पर उतर आती है और इन राष्ट्रों के राजदूतों को आखिरी वक्त तक भनक नहीं लग पाती। वाशिंगटन और लंदन उन तानाशाहों को सूली पर लटकने तक समर्थन देते रहते हैं। इसका कारण स्पष्ट है। उनके राजनयिक आस्ट्रेलियाई सरकार की तरह यह मानकर चलते हैं कि सारी दुनिया में अंग्रेजी चलती है और अंग्रेजी के बिना किसी का काम नहीं चलता। उन्हें स्थानीय भाषा सीखने की जरूरत नहीं है।

लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि किसी भी देश में जब तख्ता-पलट होता है तो उसकी भाषा में होता है। जब जनता बगावत करती है तो वह अपने नारे विदेशी भाषा में नहीं गढ़ती। व्लादिमार पुतिन के विरूद्घ लाल चौक में जो प्रदर्शन हो रहे हैं, उनमें नारे किस भाषा में लगाए जा रहे हैं, वहाँ जो भाषण हो रहे हैं, वे अंग्रेजी में हो रहे हैं या रूसी में हो रहे हैं? मिस्र के तहरीर चौक पर बगावत का जो बिगुल बजा, वह किस भाषा में था? अंग्रेजी में था या मिस्री में था? जनता की बगावत तो हमेशा स्थानीय भाषा में ही होती है लेकिन जब हिंसक सैन्य तख्ता-पलट होते हैं तो उनके षडयंत्र भी प्राय: स्थानीय भाषा में ही रचे जाते हैं। 1978 में अफगानिस्तान में सरदार दाऊद का तख्ता उलटनेवाले तीन प्रमुख फौजी अफसरों में से एक भी अंग्रेजी नहीं जानता था। उनमें से एक को फारसी समझने में भी कठिनाई होती थी। वह सिर्फ पश्तो ठीक से जानता था। जो-जो देश अंग्रेज के गुलाम नहीं रहे हैं, उनके ऊँचे से ऊँचे अफसर भी अंग्रेजी नहीं जानते। ऐसे देशों की संख्या लगभग 150 है। अंग्रेजों के गुलाम रहे देशों की संख्या 50 भी नहीं है। भारत जैसे इन 50 देशों में भी अंदर ही अंदर और नीचे-नीचे क्या चल रहा है, यह अंग्रेजी के जरिए नहीं जाना जा सकता। याने उनके अंदर की बात जानने के लिए आपको उनकी भाषा जाननी होगी। करोड़ों रू. खर्च करके भी बड़े राष्ट्रों की जासूसी क्यों फेल हो जाती है? वह ऊपर-ऊपर की बात पर नज़र जरूर रखती है लेकिन अंदर पैठने की राह उसने बनाई ही नहीं। ईराक़ में मार खाने के बाद जार्ज बुश को कुछ अक्ल आई। उन्होंने अरबी-फारसी सिखाने के लिए तो बड़ा बजट बनाया ही, अपने राजनयिकों को हिंदी सिखाने के लिए 20 करोड़ डॉलर का प्रावधान किया।

किसी भी देश के अफसरों, पत्रकारों और कुछ नेताओं से विदेशी भाषा के दम पर चलनेवाली कूटनीति तब तक सामान्य होती है जब तक कि उस देश में सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा होता है लेकिन जब मामले गंभीर हों, बुनियादी हों और जनता से जुड़े हों तो विदेशी भाषा का माध्यम बिल्कुल असंगत हो जाता है। आस्ट्रेलियाई प्रधानमंत्री का यह कहना कि भारत अंग्रेजीभाषी लोकतंत्र है, अपने आप में विरोधी बात है। वह लोकतंत्र ही क्या है, जो लोकभाषा में न चले? भाषाई दृष्टि से देखें तो भारत लोकतंत्र पर सबसे बड़ा व्यंग्य है। भारत को उत्तम लोकतंत्र तो तब कहा जाए जबकि उसकी लोकसभा

में सिर्फ लोकभाषाएँ बोली जाएँ और विदेशी भाषा पर पूर्ण प्रतिबंध हो। उसकी सर्वोच्च अदालत विदेशी भाषा में न तो बहस करने दे और न ही कोई फैसले करे। सरकार का कोई भी मौलिक काम विदेशी भाषा में न हो। लेकिन जब भारत के पवित्र मंदिरों में ही भारत माता की जुबान कटती हो तो विदेशियों से कैसे आशा करें कि वे हमारी भाषाओं का सम्मान करेंगे? यदि हम अपना सारा काम-काज हिंदी में करें तो विदेशी राजनयिक तो अपने आप हिंदी सीखेंगे। वे रूस में रूसी और चीन में चीनी सीखते हैं या नहीं?

हम न अपनी भाषा का सम्मान करते है और न ही विदेशी भाषाओं का। हमने अंग्रेजी का गोल पत्थर अपने गले में लटका रखा है। सिर्फ साढ़े चार देशों की भाषा है, अंग्रेजी! अमेरिका, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और आधे कनाडा की। लेकिन हम दुनिया के 200 देशों को इसी गोरे चश्मे से देखते हैं। जब हम उनकी आँखों से उन्हें देखने लगेंगे तो हमारी कूटनीति पर चार चाँद चमचमाने लगेंगे।

लॉरेंसविल हिंदी पाठशाला में दिवाली की पूजा करते हुए बच्चे और शिक्षिकाएँ

आजादी का मन्तव्य क्या?

डॉ. प्रीत अरोड़ा

शिक्षा - एम.ए. हिंदी - पंजाब विश्वविद्यालय से हिंदी में दोनों वर्षों में प्रथम स्थान के साथ
कार्यक्षेत्र - अध्ययन एवं स्वतंत्र लेखन व अनुवाद। अनेक प्रतियोगिताओं में सफलता, आकाशवाणी व दूरदर्शन के कार्यक्रमों तथा साहित्य उत्सवों में भागीदारी, हिंदी से पंजाबी तथा पंजाबी से हिंदी अनुवाद। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन जिनमें प्रमुख हैं- हरिगंधा, पंचशील शोध समीक्षा, अनुसन्धान, अनुभूति, गर्भनाल, हिन्दी-चेतना(कैनेडा), पुरवाई (ब्रिटेन), आलोचना, वटवृक्ष, सृजनगाथा, सुखनवर, वागर्थ, साक्षात्कार, नया ज्ञानोदय, पाखी, प्रवासी-दुनिया, आदि में लेख, कविताएँ, लघुकथाएं, कहानियाँ, संस्मरण, साक्षात्कार, शोध-पत्र आदि। वेब पर मुखरित तस्वीरें नाम से चिट्ठे का सम्पादन।
सम्मान-अमर उजाला की ओर से कविता सम्मानित, सीमापुरी टाइम्स की ओर से आयोजित राजीव गाँधी अवार्ड (२०१२) के लिए नामांकित
"अनुभूति" नामक काव्य-संग्रह का सम्पादन (प्रकाशाधीन)
विपत्र - arorapreet366@gmail.com ब्लॉग--http://merisadhna.blogspot.in/

भारत एक आजाद देश है। प्रत्येक वर्ष आजादी का जश्न पूरे भारतवर्ष में बड़ी धूमधाम और उत्साहपूर्वक मनाया जाता है। आजादी से तात्पर्य है-- प्रत्येक व्यक्ति को अपने मानवीय मौलिक अधिकारों को प्रयोग करने का पूर्ण रूप से अधिकार हो। चाहे वह निम्न, मध्य या उच्च वर्ग से ही सम्बन्धित क्यों न हो। इसके साथ ही साथ एक साधारण व्यक्ति स्वयं को दूसरे व्यक्ति के समक्ष दलित, दमित व उपेक्षित न महसूस करे अपितु वह अपने व्यक्तित्व और अस्तित्व को सुरक्षित रख सके। अब प्रश्न यह उठता है, क्या भारत में रह रहा प्रत्येक व्यक्ति सम्पूर्ण रूप से आजादी का जीवन व्यतीत कर रहा है? सन 1947 को हमारा देश आजाद हुआ और थोड़ा-बहुत सामाजिक मूल्यों में बदलाव भी आया, परन्तु समाज को परम्परागत रूढ़ियों से आज भी आजादी नहीं मिल पाई। आजादी से पूर्व भी व्यक्ति बेबसी, यातना व गुलामी का जीवन जीने को अभिशप्त था और आजाद भारत में भी वह अपने मानवाधिकारों से वंचित पालकों और मालिकों पर आश्रित रहकर गुलाम ही है। यदि भारत के प्रत्येक व्यक्ति को नागरिक के रूप में समाज की महत्त्वपूर्ण इकाई व उपयोगी अंग कहा जाता है, तो उसे मानवीय अधिकारों से अपरिचित तथा वंचित क्यों रखा जाता है? उसे प्रत्येक क्षेत्र में अपने अधिकारों का उचित उपयोग करने की स्वतंत्रता क्यों नहीं दी जाती? वह परमुखापेक्षी बनकर जीवन व्यतीत क्यों करता है? आज भी ऐसे कई सवाल हमारे सामने खड़े हैं। गुलामी के चक्रव्यूह में पुरुष, नारी, बच्चे व बुजुर्ग आदि सभी वर्ग प्रताड़ित होकर परिभाषित और प्रतिबंधित जीवन जी रहे हैं। अत्याचारों का सिलसिला कहीं रुकता ही नजर नहीं आता।

आजादी का मन्तव्य क्या?

अगर गुलामी का जीवन जी रहा व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होना भी चाहता है, तो परिवार व समाज द्वारा उस पर ऊंगली उठाकर प्रश्नचिन्ह लगाए जाते हैं। जब उसे शोषण अत्याचारों, उत्पीड़नों के कटहरे में अभियुक्त बनाकर व्यापक मानवता के अनगिनत लाभों से वंचित करके मानसिक रूप से त्रस्त किया जाता है, तब उसे सुरक्षा, सम्मान और समानता का ज्ञान नहीं हो पाता। आज इस गुलामी का स्तर पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्तर पर अबाध गति से बढ़ता जा रहा है।

पारिवारिक स्तर पर सदस्यों द्वारा ही एक-दूसरे से भेदभाव करके उसे पराश्रित होने पर मजबूर किया जाता है। खासतौर पर परिवार में नारी की पहचान पुरुष के साथ ही सम्भव मानी जाती है, यथा-घर से निकलने पर पाबन्दी लगाना, शिक्षा से वंचित करना,मानसिक व शारीरिक रूप से शोषित करना,छोटी उम्र में विवाह कर देना तथा आर्थिक अधिकारों से परावलम्बी बना देना आदि गुलामी की भूमिका को और भी प्रखर कर देते हैं। इसी तरह परिवार में बुजुर्गों की स्थिति भी अत्यंत दयनीय होती जा रही है। वे आत्म-विस्मृति के जाल-जंजाल में फँसकर दीन-हीन पतित बनकर घर की कैद में ड़र एवं भय की हथकड़ियों से बँधकर रह जाते हैं।

सामाजिक स्तर में स्थिति और भी शोचनीय है। समाज में नारी-वर्ग की ओर देखें तो आए दिन भ्रूण-हत्या, बलात्कार, दहेज-उत्पीड़न व छेड़छाड़ आदि की घटनाएँ दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक बढ़ती ही जा रही हैं। दूसरे, समाज में बच्चों को लेकर भी ऐसे कई मामले सामने आते हैं जिनसे पता चलता है कि मासूम बच्चों को बंधक बनाकर उनसे रेलवे स्टेशनों और बस-स्टापों पर भीख मँगवाई जाती है। अभिभावकों द्वारा बाल-मजदूरी करवाना भी कानूनी-अपराध ही है। अभिभावक ही अपने बच्चों से बाल-मजदूरी करवाकर उसे असभ्य, अयोग्य एवं अप्रगतिशील बना रहे हैं। बच्चों की तरह बुजुर्ग वर्ग भी सामाजिक स्तर पर दुरावस्था का शिकार हो रहे हैं। इसलिए आज ओल्ड ऐज होम्स की संख्या तेजी से बढ़ती ही जा रही है। बुजुर्ग वर्ग अपनी हिफाजत के लिए इन्हीं संस्थाओं की शरण ले रहे हैं।

राजनैतिक स्तर पर योग्य व्यक्ति को उसकी काबलियत के अनुसार अवसर प्रदान नहीं किए जा रहे। उसे वहाँ भी दूसरों के आधीन रहकर कार्य करने को मजबूर होना पड़ रहा है। आज समाज के प्रत्येक क्षेत्र में राजनीति का बोलबाला देखने को मिलता है। इसी कारण भ्रष्टाचार की समस्या भयानक रूप धारण करती जा रही है जिससे आज प्रत्येक व्यक्ति इसकी पकड़ में आ रहा है।

धार्मिक स्तर पर कई जगहों पर आज भी उच्च जाति निम्न जाति पर क्रूर और वक्र दृष्टि ड़ालकर उसे समाज से बहिष्कृत कर देती है। निम्नवर्गीय व्यक्ति जीवन से अभिशप्त होकर स्वयं को एक निस्तेज आभाहीन आत्मा की भान्ति महसूस करता है।

आजादी का मन्तव्य क्या?

आर्थिक स्तर पर भी साधारण श्रमजीवी से लेकर सम्पन्न वर्ग के व्यक्ति की स्थिति दयनीय बनती जा रही है। कार्यक्षेत्र में पुरुष-स्त्री दोनों को ही बॉस द्वारा शोषण, स्थानांतरण, कम वेतन और प्रताड़ना के भिन्न तरीकों से साक्षात्कार करवाकर दासता की बेड़ियों में बाँधकर रखा जाता है जिससे वे आजीवन दूसरों के नियंत्रण में रहकर पराधीन बन जाते हैं। ऐसे ही पारिवारिक क्षेत्र में भी कई बार एक सदस्य द्वारा दूसरे सदस्य का सम्पत्ति पर से अधिकार छीन लिया जाता है।

जब बात **शैक्षणिक स्तर** की होती है तो प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल अक्षर ज्ञान ही नहीं होता अपितु शिक्षा ही मानव में आत्मसुरक्षा का भाव जागृत करके उसे एक कुशल नागरिक बनाती है। इस बात से भलीभांति परिचित होते हुए भी भारतीय समाज में जहाँ आज भी बेटियों को शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा जाता है, वहाँ लिंगभेद के कारण समाज में नारी के व्यक्तित्व एवं विकास की सम्भावना ही नहीं होती।

इस तरह व्यक्ति प्रत्येक क्षेत्र में गुलामी के साये में जीवन की बाजी हारकर स्वयं के लिए यथोचित निर्णय ले सकने के अभाव में अपने अधिकारों की रक्षा नहीं कर पाता और उसका मन और शरीर अमानुषिक यंत्रणाओं को सहने का अभ्यस्त बन जाता है। आज नवीन प्रगतिशील जीवन की आंकाक्षा रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के अस्तित्व का बोध उसकी स्वतंत्रता की अनूभूति में ही है। आज सबसे अधिक जरूरत है कि व्यक्ति-व्यक्ति के बीच सौहार्दपूर्ण ,आत्मीय सम्बन्धों की समानतापूर्ण स्थापना हो और एक ऐसा मानवीय समाज बने जहाँ कोई भी किसी के साथ बर्बतापूर्ण अमानवीय व्यवहार न करे। प्रत्येक व्यक्ति आत्मसम्मान,आत्मनिर्भरता व आत्मविश्वास की भावना के साथ आगे बढ़े। समाज में जिस व्यक्ति को कमजोर व असहाय समझकर अवहेलित किया जाता है वह भी दूसरों के समान समाज में अपना महत्त्व सिद्ध करके जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाए तभी उसे समाज में उचित आदर,सम्मान व स्थान का अधिकारी घोषित किया जा सकेगा। इसके साथ-ही-साथ उन सामाजिक मूल्यों व रूढ़िगत परम्पराओं में भी बदलाव लाना होगा जो एक व्यक्ति को दूसरे के समक्ष दास बनाने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। जब इन सभी बातों का ध्यान रखा जाएगा तब एक स्वस्थ परिवार, समाज व राष्ट्र का निर्माण सम्भव हो पाएगा और प्रत्येक व्यक्ति सही मायनों में आजाद होगा।

> स्वतंत्रता के लिए लाखों लोगों ने
> अपना जीवन बलिदान कर दिया लेकिन
> कुछ स्वार्थी लोगों के कारण हमें
> सही स्वतंत्रता नहीं मिली।
>
> अन्ना हजारे

संकल्प का बल

डा. रवीन्द्र अग्निहोत्री

सदस्य, हिंदी सलाहकार समिति,
वित्त मंत्रालय, भारत सरकार

वेदों में अनेक स्थलों पर संकल्प शक्ति का बखान किया गया है, यजुर्वेद का संकल्प सूक्त तो इसका एक भण्डार ही है। संकल्प की शक्ति कैसी होती है और यदि संकल्प कर लिया जाए तो कैसे-कैसे चमत्कार किए जा सकते हैं – इसी का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है।

इजरायल देश से आप परिचित ही हैं जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद 1948 में विश्व भर में फैले यहूदियों को एक स्थान पर बसाने के लिए बनाया गया। आज वहां की मुख्य राजभाषा हिब्रू है और सहयोगी भाषाएँ अंग्रेजी एवं अरबी हैं। अंग्रेजी और अरबी तो आज विश्व के अनेक देशों में बोली जाती हैं, पर हिब्रू ऐसी भाषा है जो दुनिया के नक़्शे से लगभग गायब ही हो गई थी। इसके बावजूद यदि आज वह जीवित है और एक देश की राजभाषा के प्रतिष्ठित पद पर आसीन है, तो इसके पीछे एक व्यक्ति का, केवल एक व्यक्ति का, विश्वास कीजिये केवल एक व्यक्ति का संकल्प है, संघर्ष है, जूनून है, स्वाभिमान के साथ जीने की अदम्य इच्छाशक्ति है। जानना चाहेंगे कि वह एक व्यक्ति कौन था, हिब्रू कैसे नष्ट हुई और उसने उसे अपने संकल्प के बल पर पुनर्जीवित कैसे किया?

जब विश्व की प्राचीनतम भाषाओं की चर्चा होती है तो सबसे पहला नाम तो "संस्कृत" का लिया जाता है क्योंकि संस्कृत में लिखा "ऋग्वेद" विश्व साहित्य में अब तक उपलब्ध प्राचीनतम ग्रन्थ है, पर विश्व के अन्य भागों में जो भाषाएँ विकसित हुईं, उनमें एक प्राचीन भाषा है हिब्रू। यह शब्द मूलतः मिस्र की भाषा के "एपिरू" शब्द से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है - मिस्री समाज के कुछ ऐसे वर्ग जो ख़ास तरह के काम करते थे; पर कालान्तर में यह शब्द उस भाषा के लिए रूढ़ हो गया जिसे अरब वाले "इब्रानी" कहते थे। इस भाषा की कतिपय विशेषताएं आरमाइक और अरबी भाषा से मिलती - जुलती हैं।

यों तो हिब्रू भाषा के लिखित रूप का सबसे प्राचीन उदाहरण अब से लगभग तीन हज़ार वर्ष पूर्व का इजरायल में मिलता है जो सम्राट डेविड

संकल्प का बल

और उसके बेटे सोलोमन के समय का बताया जाता है, पर प्राचीन हिब्रू में लिखी हुई सबसे प्रसिद्ध रचना बाइबिल में है। "बाइबिल" शब्द का मूल अर्थ यद्यपि "पुस्तक" है, पर पाठक जानते ही हैं कि अब इस शब्द का प्रयोग यहूदियों और ईसाइयों के उस पवित्र ग्रन्थ के लिए होता है जो स्वयं अनेक पुस्तकों का संग्रह है। यह तो निश्चित है कि इन पुस्तकों की रचना अलग - अलग समय पर और अलग - अलग लोगों ने की, पर वह कब हुई, और जो बाइबिल आज हमारे सामने है उसमें उन्हें कब संकलित किया गया - इस सम्बन्ध में विद्वान एकमत नहीं हैं। यही कारण है कि बाइबिल के विभिन्न संस्करणों में संकलित पुस्तकों की संख्या 66 से लेकर 81 तक है। बाइबिल से संबंधित सात ऐसी पुस्तकें भी हैं जो पहले बाइबिल में संकलित की जाती थीं, पर बाद में जिन्हें ईसाई पंथ को मानने वाले विद्वानों ने स्वयं अप्रामाणिक (The Apocrypha) मानकर खारिज कर दिया है। हाँ, यह ऐतिहासिक तथ्य है कि 17 वीं शताब्दी के शुरू में (1607 से 1611) इंग्लैण्ड में किंग जेम्स ने बाइबिल का जो अनुवाद अंग्रेजी में 47 अनुवादकों से कराया और बाद में उसमें कुछ संशोधन कराकर जो संस्करण ऑक्सफोर्ड ने 1769 में प्रकाशित किया, आज उसे ही लगभग पूरे विश्व में अंग्रेजी का प्रामाणिक संस्करण माना जाता है। इस बाइबिल के सामान्यतया दो भाग किए जाते हैं - ओल्ड टेस्टामेंट और न्यू टेस्टामेंट। ओल्ड टेस्टामेंट में 39 और न्यू टेस्टामेंट में 27 अर्थात कुल 66 पुस्तकें हैं।

भाषा की दृष्टि से देखें तो ओल्ड टेस्टामेंट की प्रारम्भिक पांच पुस्तकें हिब्रू में लिखी हुई थीं जिन्हें पेंटा - ट्यूक (Pen-ta-teuch) अथवा तोरा (Torah) कहा जाता है। ओल्ड टेस्टामेंट की शेष पुस्तकें लैटिन में और न्यू टेस्टामेंट की सभी पुस्तकें ग्रीक में लिखी हुई थीं। पेंटा - ट्यूक के बारे में ऐसा माना जाता है कि ईसा से लगभग पांच शताब्दी पूर्व इन्हें बाइबिल में शामिल किया गया जबकि इनकी रचना काफी पहले, लगभग नौ शताब्दी ईसा पूर्व हो गई थी।

इस प्रकार हिब्रू भाषा बाइबिल में तो सुरक्षित हो गई, पर बाद में कई कारणों से वह सामाजिक जीवन से गायब होती चली गई। इनमें सबसे प्रमुख कारण था राजनीतिक। उस समय फारस (वर्तमान ईरान) साम्राज्य का विस्तार होता जा रहा था । ईसा पूर्व छठी शताब्दी में तो ईरानी आर्य सम्राट क्रूश (साइरस) का शासन मध्य एशिया से लेकर भूमध्य सागर तक फैल चुका था। (*"आर्य सम्राट" शब्द से चौंके नहीं। ईरान भी अतीत में वेद, वैदिक साहित्य और वैदिक परम्पराओं से अनुप्राणित रहा है और ईरान के शासक "आर्य सम्राट" ही कहलाते थे बाद में, जब ईरान में इस्लाम मज़हब फैल गया तब भी शासकों की यह उपाधि बरकरार रही। हाँ, अब*

संकल्प का बल

लगभग तीस वर्ष पूर्व हुई" इस्लामी क्रान्ति "के बाद यह परम्परा समाप्त हो गई है)। हम बात कर रहे थे ईरानी साम्राज्य की। क्रूश के पुत्र कम्बीसस, और उसके बाद दारा (डेरियस) ने साम्राज्य का विस्तार करके मिस्र, थ्रास (वर्तमान बुल्गारिया), मेसिडोनिया आदि स्थानों को भी जीत लिया। इस साम्राज्य में रहने वाले यहूदियों को "आरमाइक भाषा" (जो बेबिलोन में बोली जाती थी) अपनाने के लिए विवश किया गया (कुछ वैसे ही जैसे भारत में लोग पिछली कुछ शताब्दियों से अंग्रेजी अपनाने के लिए मजबूर हो रहे हैं)। इससे हिब्रू पृष्ठभूमि में चली गई।

हिब्रू को एक और ज़बरदस्त झटका तब लगा जब ईसा से 586 वर्ष पूर्व बेबिलोन के शासक "नाबुचाडनज़र" ने यरूशलम पर कब्ज़ा कर लिया और यहूदियों पर तरह - तरह के अत्याचार किए। अतः यहूदियों को अपना वतन छोड़कर विश्व के अन्य भागों में पलायन करना पडा। इसे ही "डायस्पोरा" (Diaspora) कहा जाता है। बाद में ईसा के जन्म के 70 वर्ष बाद यरूशलम के नष्ट हो जाने पर तो बचे - खुचे यहूदी भी वहां से अन्यत्र जाने के लिए मजबूर हो गए। इस सबका परिणाम यह हुआ कि सैकड़ों वर्षों तक मेसिपोटामिया के यहूदियों की बोलचाल की भाषा आरमाइक ही बनी रही। जो यहूदी मध्य पूर्व में जा बसे थे , उन्होंने अरबी को अपना लिया । इस प्रकार वे जिस देश में गए , उसी देश की भाषा को अपनाते चले गए। अतः हिब्रू भाषा विस्मृति के गर्त में समाती चली गई।

आधुनिक युग में जिस व्यक्ति के मन में इस भूली - बिसरी हिब्रू भाषा को पुनः जीवित करने की इच्छा जागी, उसका नाम था - एलिज़र बेन यहूदा। उसका जन्म 1858 में एक सामान्य परिवार में लिथुवानिया (रूस) के एक गाँव में हुआ था। रूस में तब ज़ार का शासन था। यहूदी उसमें अपने को उपेक्षित अनुभव करते थे। अतः यहूदियों की अस्मिता को सम्मान दिलाने के लिए एक राष्ट्रव्यापी आन्दोलन शुरू हुआ, और बेन यहूदा भी उस आन्दोलन से जुड़ गया। अपने जीवट, न्याय के लिए संघर्ष करने की उत्कट भावना और यहूदियों के सम्मान को सर्वोपरि मानने के कारण वह शीघ्र ही उस आन्दोलन का प्रमुख कार्यकर्ता बन गया। इन्हीं दिनों उसके मन में अपनी मूल भाषा हिब्रू के प्रति विशेष प्रेम जागा। बाइबिल में तो हिब्रू सुरक्षित थी ही और इसलिए सिनेगाग (यहूदी प्रार्थना भवन) में उसका प्रयोग होता ही था। बेन यहूदा ने हिब्रू को यहूदियों के आपसी संवाद की भाषा बनाने का विचार लोगों के सामने रखा; पर शुरू में लोगों ने उसके इस विचार का उपहास उड़ाया, और कुछ लोगों ने तो उसे 'पागल' तक कह दिया। उन्हें लगता था कि यहूदी जिस भाषा को भूल चुके हैं, उसमें संवाद कैसे कर सकते हैं! बाइबिल के जिस अंश में हिब्रू सुरक्षित

संकल्प का बल

थी, सामान्य यहूदी तो अब न उसका अर्थ समझते थे और न उसका ठीक से उच्चारण कर सकते थे, तो फिर उसके प्रयोग की बात कैसे सोच सकते थे? स्थिति कुछ - कुछ वैसी ही थी जैसी आज हमारे समाज में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा पाने वाले बच्चों की संस्कृत के सन्दर्भ में होती जा रही है।

बेन यहूदा इन आलोचनाओं और प्रतिक्रियाओं से हताश नहीं हुआ, बल्कि इन आलोचनाओं ने उसकी इच्छा को "दृढ़ संकल्प" का रूप दे दिया जिसे साकार करने के लिए उसने जो प्रयास किए उन्हें अपनी सुविधा के लिए हम तीन वर्गों में बाँट सकते हैं - (1) घर में हिब्रू का प्रयोग (2) शिक्षा के माध्यम के रूप में हिब्रू का प्रयोग (3) विभिन्न आवश्यकताओं के लिए हिब्रू में नए शब्दों का निर्माण ।

घर में हिब्रू के प्रयोग की शुरुआत उसने अपने घर से ही की, और इसे इतना विस्तार दे दिया कि जब भी वह किसी यहूदी से घर में या बाहर मिलता तो वार्तालाप में हिब्रू का ही प्रयोग करने का प्रयास करता। अपने इन प्रयासों के प्रति वह कितना गंभीर था, इसका अनुमान इन तथ्यों से लगाया जा सकता है कि जब उसके पहले बच्चे (बेटे) का जन्म हो चुका था और घर में कोई ऐसा व्यक्ति आता जो हिब्रू नहीं बोलता था, तो वह अपने बच्चे को दूसरे कमरे में भेज देता था ताकि बच्चे के कान में दूसरी भाषा का कोई शब्द तक न पड़े। उसकी (पहली) पत्नी रूस की थी और एक दिन जब यहूदा घर पर नहीं था, वह बच्चे को सुलाने के लिए लोरी गाने लगी। अपनी ममता में उसे ध्यान ही नहीं रहा कि लोरी रूसी भाषा में है। संयोग से तभी बेन यहूदा घर में प्रविष्ट हुआ, और इसके बाद घर में जो हंगामा हुआ, उसका विवरण उसी बेटे ने अपनी आत्मकथा में दिया है।

स्कूल में हिब्रू के माध्यम से शिक्षा देने की कठिनाइयाँ और भी अधिक थीं। एक ओर तो हिब्रू में वर्तमान युग की आवश्यकताओं के अनुरूप शब्दों का अभाव था, तो दूसरी ओर ऐसे लोगों का अभाव था जो हिब्रू माध्यम से शिक्षा देने की ज़िम्मेदारी निभा सकें। बेन यहूदा ने शब्द निर्माता, शब्दकोश निर्माता, शिक्षक, नेता - सभी प्रकार की भूमिकाएं निभाईं। उसने आइस क्रीम, जेली, आमलेट, रूमाल, तौलिया, गुड़िया, ग्राहक, साइकिल, समाचार पत्र, सम्पादक, सैनिक आदि के लिए हिब्रू में शब्द बनाए। अपने बनाए शब्द वह अपने समाचार पत्र, हत्ज्वी (Hatzvi) में भी छापता था। यह सर्वज्ञात है कि यहूदी लोग सामान्यतया पढ़ने में रुचिशील होते हैं। अतः उसके प्रयासों की जानकारी केवल फिलिस्तीन में नहीं, विश्व में यहूदी जहाँ भी थे, वहां तक पहुँच गई।

उसकी निष्ठा रंग लाई। उसके संकल्प के आगे अन्यमनस्क और उदासीन लोगों के मन में भी

संकल्प का बल

स्वभाषा प्रेम जागा। अब वे उसके आदोलन से धीरे - धीरे जुड़ने लगे। हिब्रू भाषा को जीवित करने के लिए उसने दिसंबर 1890 में "हिब्रू लैंगुएज काउन्सिल" बनाई, पर बाद में कार्य की गुरुता का अहसास होने पर उसे अकेडमी का रूप दिया। तब जाकर उसका स्वप्न साकार होता दिखाई देने लगा।

प्रारम्भ में बेन यहूदा ने बाइबिल वाली प्राचीन हिब्रू को ही पुनर्जीवित करने की कोशिश की थी, पर डायस्पोरा के बाद से यहूदी काफी लम्बे समय से विभिन्न स्थानों पर रह रहे थे, और उन्हीं स्थानों की भाषाओं का प्रयोग करते आ रहे थे, अतः उन्हीं भाषाओं के अभ्यासी बन चुके थे। ऐसी स्थिति में बेन यहूदा ने भी "आधुनिक हिब्रू" का जो रूप विकसित किया, उसमें रूसी, अरबी, अंग्रेज़ी आदि के भी अनेक शब्द एवं अन्य विशेषताएं आ गईं। बेन यहूदा अपने समाचार पत्र में जो शब्द प्रकाशित करता रहा था, बाद में उन्हें संकलित करके तथा अन्य भी अनेक शब्द बनाकर उसने एक विशाल शब्दकोश "ए कम्प्लीट डिक्शनरी ऑफ़ ऐन्शिएंट एंड माडर्न हिब्रू" तैयार किया जो 12 खण्डों में है; पर इस कोश का काम उसके जीवन काल में पूरा नहीं हो पाया, इसे उसके देहांत के बाद उसकी दूसरी पत्नी और बेटे ने पूरा किया। यह शब्दकोश आज भी अद्‌वितीय माना जाता है। आधुनिक हिब्रू की लिपि भी आरमाइक भाषा की लिपि से ली गई और उसे "स्क्वायर" नाम दिया गया। इस लिपि को अपनाने का एक विशेष कारण यह था कि पिछले लगभग दो हज़ार वर्ष से इसी लिपि में हिब्रू भाषा वाले बाइबिल के अंश की नक़ल उतारी जाती रही थी। वे इसी लिपि में उसे पढ़ते आ रहे थे और इस प्रकार अब यह उनकी अपनी लिपि बन चुकी थी।

सन 1948 में जब इजरायल राष्ट्र का उदय हुआ तो बेन यहूदा के संकल्प को एक नया आयाम मिल गया। उसका तो 64 वर्ष की आयु में सन 1922 में क्षयरोग से निधन हो चुका था, पर उसके सत्प्रयासों से जीवित की गई हिब्रू भाषा इजरायल की राजभाषा बन गई। ज़रा ध्यान दीजिए कि इजरायल को बने लगभग उतना ही समय बीता है जितना हमें स्वतंत्र हुए, पर यह यहूदियों का स्वभाषा प्रेम और स्वाभिमान ही है जिसके बल पर वहां व्यापार, प्रशासन, शिक्षा, ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, कला, राजनीति आदि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हिब्रू का ही प्रयोग हो रहा है। पूरे विश्व में यहूदियों की कुल संख्या लगभग एक करोड़ है, जिनमें से लगभग आधे अर्थात 50 लाख इजरायल में रहते हैं, पर हिब्रू भाषा केवल इजरायल में रहने वाले यहूदियों की नहीं, बल्कि पूरे विश्व में बिखरे सभी यहूदियों की भाषा बन चुकी है। यों तो हर यहूदी आज बहु-भाषाभाषी है, पर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित साहित्य की रचना हिब्रू में करना गौरव की बात समझता है।

यह इस बात का प्रमाण है कि अगर अपनी भाषा के प्रति अनुराग हो, अपनी भाषा को लेकर

संकल्प का बल

स्वाभिमान का भाव हो तो ऐसी भाषा को भी "जीवित" किया जा सकता है जिसे दूसरे लोग "मृत" समझते हैं। उस भाषा को नया रूप दिया जा सकता है, समाज को नए संस्कार दिए जा सकते हैं और हर बाधा को पार किया जा सकता है। क्या हम भी अपनी भाषाओं के लिए इससे कुछ प्रेरणा लेंगे? हमारी भाषाएँ तो मृत नहीं, जीवित हैं। हमें तो केवल इन भाषाओं के प्रयोग करने का संकल्प लेना है। अपने स्वभाषा प्रेम और स्वाभिमान को जगाना है। बेन यहूदा का उदाहरण क्या हमारे मन में ऊर्जा का संचार नहीं करता? अपने अन्दर झांकिए और अपनी संकल्प शक्ति का परिचय दीजिए ।

बेटियाँ

सदा कहा जाता है कि बेटियाँ पराया धन होती हैं। 'पराये' शब्द पर हम इतना जोर डालते हैं। बार-बार दोहराने पर बिना किसी चोट के भी असहनीय चोट का सा अहसास होता है। क्या कभी किसी ने भी पराये शब्द का प्रयोग करते समय यह सोचा है कि बेटी के निर्मल कोमल मन को भी ठेस पहुँचती होगी, पराया पन सा लगता होगा उसे। वो भी सोचती होगी कि, क्या मैं बोझ हूँ? कैसे हम जिगर के टुकड़े बेटा-बेटी में से बेटी को पराया कह सकते हैं? शायद हम पराये शब्द का भावार्थ ही नहीं जानते।

लानत है हमारी इंसानियत पर, धिक्कार है ऐसी तुच्छ मानसिकता पर जो बेटा-बेटी में फर्क समझते हैं। मेरे लिए अगर बेटा बुढ़ापे की लाठी है तो बेटी मेरे जीवन कि ज्योति है। बेटा यदि दृष्टि है तो बेटी सम्पूर्ण सृष्टि है, बेटा यदि आँखों का तारा है तो बेटी आसमान सारा है। जब भी शहर में बेटी बचाओ, बेटी बचाओ के बड़े-बड़े होर्डिंग्स देखती हूँ तो मन बहुत दुखी होता है कि मानवता पर कितना भद्दा मजाक है। क्या हम इतने निष्ठुर और हृदय हीन हैं जो ईश्वर की दी हुई संतान को बचाने के लिए सरकार को पहल कर हमें समझाना पड़े अभियान चलाना पड़े? बेटी तो गंगा सी पवित्र कल-कल करती नदी की धार है, कानों में मधुर संगीत पैदा करने वाली वीणा का तार है। उल्लास, उमंग, प्रसन्न्ता का त्यौहार और प्रकृति का अनमोल उपहार है।

—अनीता दानी

वाश्विता एक नाम

इला कुमार

इला कुमार जी, हिन्दी कवि, लेखक और अनुवादक हैं जिनकी रचनाओं में कविता की चार किताबें, बागवानी पर एक किताब और एक उपन्यास शामिल हैं। उन्होंने जर्मन कवि रेनर मारिया रिलके की कविताओं तथा चीनी दार्शनिक ताओ ते चिंग के छंदों को अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद किया गया है। इनकी कविताओं का अनेक भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है। इनके कई लेख और कविताएँ नियमित रूप से राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय, और ई - पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं।

"कभी-कभी इच्छा होती है कपड़े बदलने के साथ-साथ शरीर भी बदल डालूँ।"

"क्या..."

स्वयंभू की दृष्टि वाश्विता के चेहरे पर घूमकर वापस लौट आई वहाँ अनमनेपन की परत के पीछे उसका अपना ठंडा ऊहापोह कुहरे की नाई लिपटा पड़ा था।

रेलिंग की सतह पर दोनों हथेलियाँ टिकाकर खड़ी वाश्विता की मुद्रा में न कोई प्रश्न था न उत्तर की प्रतीक्षा। सामने नीम के तने पर मजबूत पकड़ जमा-जमाकर फैली मनीप्लांट की लतर की दिशा में पसरी निगाहों में छिपी उलझन की लकीर सीधी नीम के खुरदरे तने तक फैली हुई थी। सोच में डूबी उस मुद्रा के पीछे शायद उसके स्वयं के स्वप्न थे। मानों बहुत से स्वप्नों के बीच उनकी सत्यता असत्यता को तौलती हुई वह खड़ी थी। लाल फर्श की पारदर्शिता पर हल्के आसमानी रंग की पोशाक में मूर्तिवत खड़ी वाश्विता की गर्दन की खम में वही राजरानियों वाला सौंदर्य था, सुराहीदार कंधों पर टिकी ऐश्वर्यित मुस्कान से ढकी लंबोत्तरी गोलाई।

स्वयंभू ने सोचा कि वह वाश्विता करीब जाए, थोड़ा आगे बढ़कर दाहिने कंधे के नीचे बाँह और पीठ पर अपनी दाहिनी हथेली को नरमी से टिका दे और तब शायद उलझनें स्वयं वहाँ से तिरोहित हो जाएँगीं। झाड़ियों के बीच छिप-छिपकर चुनमुन करती चिड़ियों के पास चली जाएँगी।

उसने गोलाई में कटी गुड़हल की झाड़ी को देखा, वहाँ पत्तों की ओट पूरी गोलाई में फैली हुई थी, अंदर के गोलक में डालियाँ एक दूसरे में उलझी हुई, उसके अंदर शायद चिड़ियों के घोंसले थे। उस गोल झाड़ी के अंदर से हमेशा चिड़ियों की चुनमुनाहट की आवाज़ आती।

कल शाम ही ड्रेसिंगरुम में कपड़े बदलते समय यह बात में आई।

"क्या फायदा? फिर से गर्भगृह, फिर बचपन।"

स्वयंभू ने सोचा कि वह आगे कहे कि फिर एक बार कई वर्ष प्रबुद्ध होने के इंतजार में बीत जाएँगे। इतने सालों में जो इतनी मेहनत से यह सारा कुछ सीखा समेटा गया है पुरानी अड़चनों को परे हटाकर मंजिल की ओर चले गए रास्ते पर आगे और आगे बढ़ने की चेष्टा के बीच समृद्ध वर्ष बिताए गए हैं, वह सारा कुछ फिर से मुट्टी से रेत की नाई फिसल जाएगा। क्या पता फिर से कायाकल्पित जीव वह सब पुराना समेट पाने में सक्षम हो पाए या नहीं।

"हूँ, मेरे मन में भी यही बात आई थी।"

वाश्विता की अनमनी आवाज़ बरामदे के रेलिंग के पार चली गई। मोटे लकड़ी के डंडों से बनी रैलिंग सफेद पेंट से पुती हुई जड़ भाव में स्थित थी। लकड़ी के लंबे टुकड़ों के पार पूरा बगीचा पसरा पड़ा था।

एक, दो, तीन, चार- यहाँ सामने रेलिंग के पूरे 16 डंडे ऊर्ध्व खड़े थे। बीच में बर्फी की शक्ल के काठ के टुकड़े सीधे खड़े डंडों को ऊपर से अपने अंदर समेटते हुए। पूरे बरामदे को घेरने वाले उभरी हुई सतह वाले मोटे डंडे सरीखे लकड़ी के लंबे टुकड़े रेलिंग की ऊपरी सतह को सिरजते हुए लंबाई में बरामदे को घेरे हुए खड़े थे।

उदग्र खड़े 12 टुकड़ों को जोड़कर बनी हुई रेलिंग की एक यूनिट थी। बरामदे को घेरती हुई यहाँ से वहाँ तक फैली हुई, पूरी संरचना के बीच ऐसे चौबीस यूनिट उपस्थित थे। एक लंबा बरामदा था वह।

वाश्विता ने लम्बे बरामदे को एक बार उसकी पूर्णता में पूरा देखा। वहाँ हमेशा की तरह फर्श की लाल पारदर्शिता पसरी पड़ी थी। वहाँ हर समय चिकनी पारदर्शिता को काटते हुए यहाँ-वहाँ रक्खे गए गमलों के पौधों का चिकना हरापन सुबह से शाम तक वहाँ की शाँति फिजा में दमकता रहता।

मांसटेरा की गोलाकार पत्तियों की सतह कमल की तर्ज पर अपने अंडाकार बनावट को छोड़ मानो गोलाई की ओर मुड़ना चाहती। हरे डंठलनुमा तने से एक-एक करके पत्ते निकलते। पहले वे लपेटे गए गोल मुलायम डंडे जैसे दिखते फिर शनैः शनैः एक-एक पत्ती खुलनी शुरु होती। नर्म हरेपन की छाँह में डूबी चिकनी सतह।

वाश्विता ने सभी गमलों को एक साथ देखा, वहाँ पौधों का अपना संसार था, उनका समाज था। छोटे-मोटे, ठिगने, लंबे। बरामदे के मध्य में गोलाकार फर्श पर बेंत की कुर्सियों के तिरछे झुकाव बेत की गोलाईयों में डूबे हुए। धूप थोड़ी तिरछी होकर छत के मुड़े कोनों से अंदर झाँककर चुपचाप कुर्सियों की पीठ पर पसर गई थी। वहाँ पोर्टिको के खंभे से लेकर बेंत की कुर्सियों तक स्वर्ण रश्मियाँ अगले घंटों में अपना साम्राज्य फैलाने वाली थीं।

उन स्वर्ण रश्मियों के संग एक-एक जूही के पत्तों से एक-एक सूर्य किरण टकराएगी। कुछ किरणें तो सीधी निकल जाएगी, कुछेक परावर्तित हो इधर-उधर फैल जाएंगी और जूही की लतरों से घिरे मेहराब की ऊपरी गोलाई को बिना छुए हुए धूप का एक गुच्छा सीधा बरामदे की फर्श पर जा लोटेगा। फर्श की सीमेंटी सतह अंतिम किरण के रहने तक प्रकाशित रहेगी, फिर वहाँ एक कच्चा धुंधलका घिर आएगा।

"मैं अंदर जा रहा हूँ।"

स्वयंभू की आवाज़ गोल मेहराब के पीछे कुनमुना कर छिप गई, वाश्विता ने ड्राईगरुम के दरवाजे से अंदर जाती हुई उसकी आकृति को देखा।

वह स्वयं के ऑर्गन बजाने का समय था। उसकी एकमात्र बची-खुची हॉबी जिसे उसने एहतियात से संभाल समेट कर रखा था।

पिछले बरामदे में खुलने वाले अंदर के गोल कमरे में ऑर्गन लंबे स्टैंड पर रखा रहा करता, छुट्टियों के दिन ढलती शाम के पहले वाले घंटे में स्वयंभू के अंदर एक तलब जाग उठती। एक अनदेखी हवा की तह लहर की शक्ल में उसके बालों के सिरे को छूती, सभी बालों की जड़ें एक साथ सिमसिमा उठती। झुरझुरी की तह बाहों के बालों से लेकर समूची त्वचा पर सरसरा उठती, उसका पूरा ज़िस्म अलग किस्म की लालसा तले लरज उठता, वह जहाँ कहीं भी बैठा होता, बस उठ खड़ा होता।

"एक्सक्यूज मी"

मंत्रबिद्ध सा वह शाम की सपनीली हवा के संग अंदर के गोल कमरे की ओर चल पड़ता। ऑर्गन पर झुकी उसकी आकृति किसी यूनानीदेव की तरह नर्म धूप-छाँव के बीच खड़ी दिखती। कमर तक सीधी सतर खड़ी आकृति कंघों के पास से थोड़ी झुकी हुई। ऑर्गन बजाता हुआ वह किसी के पास नहीं होता उस समय वह स्वयं अपने पास भी नहीं रहा करता,

वाश्विता ने कई बार इस सत्य को करीब से पहचाना था।

हवा में अनजानेपन की छुअन, धुनों की तेज़ सरगम के संग कौंधने लगती, स्वयंभू के अंदर का अजनबीपना वातावरण के ज़र्रे-ज़र्रे पर छा जाता। ऐसे में वाश्विता की इच्छा होती वह स्वयंभू के करीब जाए उसे छूकर महसूस करे।

"मैं कपड़े की तरह शरीर बदल डालना चाहती हूँ।" वाश्विता के आवाज़ की गूंज स्वयंभू के पीछे-पीछे चुपके से गोल कमरे तक चली आई थी।

पिछले गोल बरामदे की ग्रिल के करीब खड़े होकर स्वयंभू ने पीछे पसरे बाग के खुले हिस्से को निहारा- अमरुद, नींबू, बेर के झुरमुट के नीचे मिट्टी में जड़ों के पास दिन रात पाइप लगा रहता, सुबह शाम नल आने के समय पानी स्वयं आगे बह-बहकर बीच की पूरी ज़मीन को गीला कर डालता वहाँ बिछी सूखी पत्तियाँ गीले कतरों को अपनी बेतरतीब परतों तले दुबका लेतीं, दूर खड़े नींबू अपनी जड़ों को पसारकर कतरा-कतरा पानी सोख लिया करते। मिट्टी द्वारा निथरी छनी हुई वे बूंदें चढ़ती-चढ़ती ऊपरी तनों तक चढ़ जातीं और वाष्पित हो नींबुओं की हरी परत के नीचे छिप जातीं।

कुछ पानी वहीं नीचे मिट्टी में पाइप के पास जमा रह जाता, छोटे डबरे की शक्ल में। हर दोपहर वहाँ बुलबुल, हुद-हुद और पंडुक नहाने आते। छोटी गौरैया डूब-डूब होकर नहाती, बीच-बीच में पंखों को पसार कर धोती। मैना जब नहाती तो स्नान खत्म कर लेने के बाद भी देर तक उसके पंखों की साज संभाल चलती। चोंच घुमा-घुमाकर वह एक-एक पंख को संवारती, बीच-बीच में सिर को ख़ास लय में झटकती।

स्वयंभू ने ऊभ डूब करके चिड़ियों को नहाते हुए देखा। इनमें से किसी भी चिड़े-चिड़ी को याद है अपना पूर्व जन्म?...

लेकिन वाश्विता तो चिड़ा-चिड़िया नहीं...

थोड़ा तो एहसास रहना ही चाहिए कि किन मुश्किलों से यह दुबारा मिले संग साथ का सफर शुरु हुआ है। उसकी अपनी माँ बार-बार उसके जन्म की बेतरतीबियों का जिक्र किया करती। ऐसे समय में उसके अंदर छिपा हुआ दैवी आश्चर्य वायुमंडल में फैल जाया करता। अंत-अंत तक बच्चे के जन्म के अजन्मे रह जाने की आशंका के विवरण को वे बार-बार दुहराती।

वाश्विता ने भी सुने हैं सारे विवरण, फिर भी वह शरीर बदलने की बात करती है?

अचानक स्वयंभू ने स्वयं अपने मन को बीते समय की परतों के बीच झिलमिली की नाई मन को विचरते हुए देखा। ग्रिल के बाहर बनती-बिगड़ती परछाइयों के बीच स्वप्ननुमा द्वीप उभर आए। वहाँ एक पूरा जन्म स्वप्न की नाई खड़ा हो गया।

बड़ी-बड़ी खिड़कियों वाले दालाननुमा कमरे के बीचों-बीच रखा हुआ बड़ा सा आबनूसी पलंग। कालीन की सतह को छूते झालरदार पलंगपोश के लेस लगे किनारे। उसी जहाज से पलंग पर तो लेटी थी वाश्विता। नहीं, नहीं, मादाम वारेन। बुढ़ापे से जर्जर शरीर के बीच जगमगाती वे आँखें अभी भी स्वयंभू के निकट आकर पूछती है।

"शैल आय स्टे मोर?"

बुढापे से झुकी कमर लिए कैप्टन वारेन उस शाम पूरे का पूरा पलंग की पट्टी पर झुक गया था।

"ओह!माय डार्लिंग! माय...माय!" बीच के वर्षों को लाख तलाशने पर भी उनके बिंब करीब आने से पहले ही हवा की तरह परावर्तित हो जाते हैं।

बीच के खंड में न जाने कितने स्वप्नों की, कितने जन्मों की छाया है, हर स्वप्न को वह कायदे से

तयशुदा खाने में सिलसिलेवार ढंग से रखना चाहता है, लेकिन यह हो नहीं पाता।

पिछले दो दशकों में हर पार्टी, हर जमघट के बीच उसका अकेलापन उसके साथ चलता रहा है। उसके मर्दाना सौंदर्य के कंघों पर टिका रहा है। उसे कुछ भी मोह न पाता था न लंबे सरु के वृक्ष से कद, न आकांक्षाओं से भरी निगाहें। एक कालखंड में दूसरों से नियत एक दूरी को साथ लिए हुए वह इस वर्तमान कालखंड में मंत्रबिद्ध देव सा विचरता रहता था। उसका अंतर्मन यह तो इंगित करता था कि ये नहीं, वो भी नहीं, लेकिन वास्तव में क्या? उसे क्या चाहिए था-यह हवा की किसी भी तह में मौजूद नहीं रहा करता था वहाँ उपस्थित रहती थी एक बैचेनी और ढेर सारे उलझनों भरे ऊन सरीखे गोले, जिनके बीच उसका मानस कैद रहा करता था।

लेकिन अनपेक्षित गंध की तरह वह शाम एक दिन उसके जीवन में आ गई थी।

गुलमुहर के गुच्छों से आसमान के कोने रंगे हुए थे। लाल नारंगी कौंध पुष्प बनी आकाश की चादर पर आयतन सरीखी पसरी पड़ी थी। डामर के सड़क की काली छाती जगह-जगह पुष्पों की पंखुड़ियों के भार तले उदभासित थी, लालिमा की प्रकाशित तरंगों के बीच सड़क अलग किस्म से आभामंडित थी।

उस शाम डिपार्टमेंटल स्टोर से मैकरोनी, मशरुम, टमाटर और चीज के पैकेट लेकर वह निकला था। वह कार के दरवाज़े को बंद कर चलने की तैयारी में था, उसने चाभी कार में घुमाई नहीं थी, स्टार्टर भी चुप था तभी स्टियरिंग के करीब झुककर एक प्रश्न ठिठक गया था।

"डू यू नो मिस्टर करंजीज़ प्लेस?"

मिसेज वारेन की खनकती आवाज़ की गूज के बीच चौंका हुआ स्वयंभू कब दरवाज़ा खोलकर बाहर आया, कब तक पसीने से भींगे चेहरे पर रुमाल रगड़ता रहा था, याद नहीं। बीच-बीच में फंसी आवाज़ में वह लगातार दुहराता रहा था।

"एक्सक्यूज मी, एक्सक्यूज मी"

उस दौरान वाश्विता आश्चर्य से भरी हुई अपलक उसे निहारती खड़ी रही थी।

"हैव आय डिस्टर्ब्ड यू एनी वे?"

पिछले जन्म में सुनी हुई वह अदभुत सौंदर्यवती आवाज़ फिर से कभी अपने समस्त अनुगूंजों समेत उसके करीब गूँजेगी, स्वयंभू को अपने किसी भी स्वप्न के दौरान इस बात का भरोसा नहीं था।

"प्लीज बी सीटेड। मैं उधर ही जा रहा हूँ, आपको छोड़ दूँगा।"

उस शाम वह गाड़ी लेकर नहीं चला था, स्वयं उसे गाड़ी समेत लिए जा रहा था। आगे और आगे। कार दौड़ती रही थी, बिना वजह और आगे। दो किलोमीटर की जगह उसने भुलभुलैया से भरी सड़कों वाले उस शहर में लंबा रास्ता चुना था। तिराहे-चौराहों से भरी कालोनियों को उसकी गाड़ी ने बार-बार पार किया। तालाबों के बगल से वह बार-बार गुजरा, सड़क किनारे लगे वृक्ष उसके नजदीक आते-जाते एकदम से पीछे छूट जाते। जानबूझ कर वह पूरी शाम लंबे रास्तों पर गाड़ी दौड़ाता रहा था। वह वाश्विता को अपने से दूर नहीं होने देना चाहता था। मिसेज वारेन को फिर उसने पा लिया था।

घर ढूँढने के नाटक के बीच वाश्विता निश्चिंत बैठी रही थी। स्वयंभू को केप टाउन के उस विशाल कमरों वाले घर की याद आई जिसकी खिड़कियों और दरवाज़ों के बीच मात्र ढाई फुट की ऊँचाई का फर्क था। ऊँची दीवारों और चिकनी छतवाले कमरे, पोर्टिको के चौकोर खंभे नाइट लैंप के बीच भुतहे दीखते। लंबी ड्राइव के बीच घंटों वह ड्राइविंग सीट पर रहा करता और मादाम वारेन बैठी रहतीं मिस्टर वारेन की बगल में।

उस शाम ड्राइव करते हुए उसने धीरे से वाश्विता की ओर देखा था, अंडाकार चेहरे पर तनी हुई भवों के नीचे पुतलियाँ कुछ सोचती सी थीं। बाल कंधों को छूते कटे हुए नहीं थे लेकिन वे कंधे पर गुच्छों की शक्ल में अब भी टिके हुए थे।

शहर के बाहर निकलने वाले फ्लाइ ओव्हर के ऊपर से गुजरते हुए उसने पाया कि नीचे बहते ट्रैफिक का रेला पुल के सबसे लम्बे पायों के बीच चलता-चलता गुम हो जाता दीख पड़ता था और तब वहाँ नीचे बहती हुई सलेटी काली नदी के बहने का गुमान होता था, जो वहाँ थी ही नहीं।

स्टियरिंग पर टिकी हथेलियों से जुड़ी बाहों और पूरे शरीर के साथ बैठा वह कार चलाता रहा था, लेकिन उसका मन पिछले बिताए काल की ओर जोरों से दौड़ पड़ा था। मिस्टर व मिसेज वारेन के बिम्ब वहीं उस काल के बीच टिके खड़े थे। एक किस्म के जादुई आवेश की चौंकन तले घिरा वह पूरे रास्ते एकदम मौन रहा।

आखिरकार गंतव्य पर कार पहुँची थी-करंजी हाउस। वाश्विता उतरकर खिड़की के नजदीक आई थी।

"थैंक्यू, मुझे बिलकुल नहीं लगा कि किसी अजनबी के साथ बैठी हूँ। बड़े लेक के पास की कालोनी में मेरा घर है, बंगला नं.210. कीप माय कार्ड।"

स्वयंभू बिना कुछ कहे गाड़ी आगे बढ़ा ले गया था।

उस पूरी रात वह बिना वजह शहर की सड़कों पर गाड़ी के दौड़ते पहियों के साथ चला था। वह रात वैसी ही बितानी तय थी शायद। उस रात न तो वह अपने बीते हुए समय से ऊबर पा रहा था न ही बीता हुआ वक़्त उसे छोड़ने को तैयार था। बत्तियों की लंबी कतार विंडस्क्रीन पर उभरती एक,दो,तीन। अनगिनत चमचमाती चेतावनी —-

आसमान पर सलेटी नीलाहट के साथ ललाई के कतरे उतर आए थे तब उसे हल्की सी थकान ने नरमी से छुआ था। कार रोक वह वही उस सड़क के शुरुआती कदमों पर ठहर गया, थर्मस से निकाली गई काली काफी के गर्म घूंट उसके अंदर पूरब के आसमान की समस्त उजास भरते रहे थे। सुनहले रेशों में डूबी हल्की ललाहट।

उसने लंबी सड़क को उसके पूरे स्वरुप में देखा था अशोक के लंबे वृक्षों की कतार, उनके पीछे पसरा खेत, जिसके अंतिम किनारे की रेख ने स्वयं को पूरा तानकर क्षितिज की गोलाई के बीच घुल जाने के लिए छोड़ दिया था। उस सुबह भी वहाँ सूरज पहले अपने मस्तक के सबसे ऊपरी बिंदु में जड़ें सुनहले लाल हीरे की कनी को निकाल जगमगाया था।

प्रहरों पर छाया अनिश्चितता का आलम समाप्त हो चुका था। उतनी सुबह उसने अपनी गाड़ी बंगले नंबर 210 की ओर मोड़ दी थी, उसके अंदर वाश्विता की नींद से तुरंत जागी हुई आंखों को देख पाने की इच्छा जादू की तरह जागी थी।

अल्लसुबह वह उसके घर के आगे आ खड़ा हुआ था, घंटी बजाने पर स्वयं वाश्विता ने ही दरवाज़ा खोला था 'मादाम वारेन'।

वाश्विता उसे देखकर बिल्कुल नहीं चौंकी थी। वह अंदर आकर चुपचाप सोफे पर बैठ गया था। घर की मालकिन चाय बनाने किचन में चली गई थी।

तब से आज तक वे एक दिन के लिए भी अलग नहीं हुए थे...।स्वयंभू ने एक साथ बीते हुए सभी दिनों के बारे में सोचा था।

शाम की गंध कमरे में फैलने लगी। एकदम धीमे-धीमे, स्वयंभू ने पहले आर्गन पर मद्धम सुरों को साधने की चेष्टा की। फिर अचानक तेज सुर स्वयं उसके करीब आ गए।

"कम टू मी...ओ ...कम..अलोन...

धूप तिरछी होकर दीवार पर तैर उठी थी, गोलाकार बिंब एक दूसरे में उलझे हुए। उनके बीच पत्तों की

छाया। पत्तों की छायाओं के बीच रोशनी के घेरों से निर्मित निरंतर प्रवाहित जादू। उथल-पुथल भरा जादू। कमरे के सन्नाटे ने ऊपर उठकर रोशनदान के शीशे को छुआ फिर पल्लों के तिरछे दरार से होकर बाहर निकल गया।

आज यह धुन क्यों?''

वाश्विता के चेहरे पर पुराने दिन अनधुले रूप में चिपके खड़े थे।

नहाधोकर आई हुई दरवाज़े के फ्रेम में खड़ी वह किसी महारानी की तरह अपनी शानदार कत्थई पोशाक के बीच तनी खड़ी थी।

स्वयंभू डूबकर मुस्कुराया।

दो पंजे नजदीक आए और नजदीक।

छाती पर छिपटी कलाइयाँ और पीठ पर सलोने चेहरे का नर्म दबाव, ''स्वाम्भो!सौमी!माय डार्लिंग!''

स्वयंभू ने गहरी सांस खींची। मन में दुहराया, ''नहीं। इस बार दोनों साथ जाएंगे। चाहे जहां भी।

कहा था मैंने

माँ के लिए

कहा था मैंने
लौटकर
कभी न कभी अवश्य आऊंगी
किसी गर्म उमस भरी दुपहरिया में
ठसाठस भरी बस से उतरकर
अपने शहर की मोहग्रस्त धरती पर
छूट गया समय
एक बारगी हिलक उठता है
दूर गुलमोहर के पीछे
आकाश के विस्तार में छिपी है
दो आकुल आँखों में भरी प्रतीक्षा
सम्पूर्ण सिहरते वजूद का यह वाष्पित दाब

इला कुमार

300 रामायण: कथ्य और तथ्य

डा. रवीन्द्र अग्निहोत्री

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है,

कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है।

- राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त

कुछ समय पहले अमरीका की यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो के प्रोफ़ेसर, ए. के. रामानुजन (1929 - 1993) के '300 Ramayanas' शीर्षक लेख की चर्चा समाचारों में रही। यह लेख दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहास विषय के बी.ए. (आनर्स) स्तर के पाठ्यक्रम में 2006 से निर्धारित था। अतः यह कहना उचित होगा कि विद्वानों की दृष्टि में यह एक उपयोगी लेख है; पर कुछ लोगों को इसकी विषयवस्तु आपत्तिजनक लगी और उन्होंने इसे पाठ्यक्रम से हटाने की मांग की। विश्वविद्यालय के न मानने पर मामला सुप्रीम कोर्ट में गया। कोर्ट के आदेश पर इस लेख की जांच करने के लिए इतिहास विभाग के चार सदस्यों की एक विशेषज्ञ समिति बनाई गई। यद्यपि चार में से केवल एक ही सदस्य ने इसके विपक्ष में राय दी, फिर भी विश्वविद्यालय ने बढ़ते विवाद को देखकर इसे 2011 में पाठ्यक्रम से हटा दिया। इस निर्णय को कुछ लोगों ने सत्य की जीत बताया तो कुछ ने सत्य की हार।

अन्य लोगों की भांति मैंने भी बचपन में रामायण कहानी के रूप में सुनी थी। तब हम लोग रामकथा से संबंधित किसी भी कहानी/ग्रन्थ को रामायण ही कहते थे (आम आदमी आज भी इसी शब्द का प्रयोग करता है)। बाद में तुलसी कृत “रामचरित मानस“ और वाल्मीकि कृत “रामायण“ पढ़ने का तथा दोनों की रामकथाओं में जो अंतर है, उसे जानने का अवसर मिला; पर जब डा. कामिल बुल्के (1909 - 1982) का शोधग्रंथ "रामकथा: उत्पत्ति और विकास" (1950) पढ़ा तो रामकथा के सम्बन्ध में वह सब जानने को मिला जो अभी तक अज्ञात था। बुल्के जी के इस ग्रन्थ को डा. धीरेन्द्र वर्मा जैसे विद्वान ने उस समय "रामकथा संबंधी समस्त सामग्री का विश्वकोश" कहा था। बुल्के जी जब तक जीवित रहे, अपनी पुस्तक के नए संस्करण में नवीन सामग्री देकर इसे अद्यतन करते रहे। मैंने सोचा कि रामानुजन का उक्त लेख स्नातक स्तर के इतिहास के विद्यार्थियों के लिए निर्धारित किया गया है। यह अवश्य ही अद्यतन सामग्री से युक्त होगा, अतः मैंने उसे पढ़ने का निश्चय किया।

रामानुजन का उक्त लेख (इसका आकार The Collected Essays of A. K. Ramanujan में 30 पृष्ठों का है) इस प्रश्न से प्रारम्भ होता है - “कितनी रामायण? तीन सौ? तीन हज़ार?“ (फादर बुल्के ने अपने अनुसन्धान में लगभग 300 रामकथाओं का उल्लेख किया है। रामानुजन ने अपने लेख के शीर्षक में उसी संख्या को आधार बनाया है) और फिर इस प्रश्न का उत्तर देने वाली जो लोक कथाएं प्रचलित हैं, उनमें से एक कहानी की रामानुजन ने विस्तार से चर्चा की है। राम सभा में बैठे थे, एकाएक उनकी अंगूठी अंगुली से निकलकर गिर गई और ज़मीन में छेद करते हुए उसमें गायब हो गई।

राम ने हनुमान को अंगूठी ढूँढने का काम सौंपा। हनुमान अलौकिक शक्ति संपन्न थे। अतः अतिलघु शरीर धारण कर उस छेद में घुस गए और पीछा करते-करते पाताल लोक पंहुच गए।

इधर राम के दरबार में ब्रहमा और वशिष्ठ जी आए और राम से एकांत में बात करने की इच्छा व्यक्त की। निश्चय यह हुआ कि अगर एकांत में कोई विघ्न डाले तो उसका सिर काट दिया जाए। अतः एकांत की व्यवस्था सुनिश्चित करने की दृष्टि से राम ने लक्ष्मण को द्वार पर खड़े रहने को कहा। अन्दर एकांत वार्ता चल रही थी कि विश्वामित्र जी आए और तुरंत राम से मिलना चाहा। लक्ष्मण ने रोका तो उन्होंने अयोध्या को भस्म कर देने की धमकी दी। विवश होकर लक्ष्मण विश्वामित्र के आने की सूचना देने के लिए अन्दर गए। यद्यपि तब तक एकांत वार्ता समाप्त हो चुकी थी जिसमें राम को यह बताया गया कि मर्त्यलोक में आपका कार्य पूरा हो चुका है, अतः अब आपको रामावतार रूप त्याग कर ईश्वर रूप धारण कर लेना चाहिए; और यद्यपि राम ने विश्वामित्र की बात जानने के बाद लक्ष्मण के अन्दर आने को गलत नहीं बताया, पर लक्ष्मण ने अपने को एकांत वार्ता के सम्बन्ध में राम के आदेश का पालन न करने का दोषी मानते हुए सरयू में जाकर शरीर त्याग दिया। तो फिर राम ने भी लव-कुश का राज्याभिषेक करके सरयू में प्राण त्याग दिए।

उधर पाताल में भूत निवास कर रहे थे। इस आगंतुक बन्दर को वहां भूत-राजा के सामने पेश किया गया। उसने हनुमान से आने का प्रयोजन पूछा। अंगूठी की बात कहने पर उसने एक थाल में हज़ारों अंगूठियाँ दिखाईं और हनुमान से पूछा कि तुम इनमें से कौन सी अंगूठी ढूंढ रहे हो। सभी अंगूठियाँ एक सी थीं। अतः हनुमान अंगूठी पहचान ही नहीं पाए। तब भूतों के राजा ने कहा कि इस थाली में जितनी अंगूठियां हैं, उतने ही राम अब तक हो चुके हैं। जब तुम धरती पर लौटोगे तो तुम्हें राम नहीं मिलेंगे। राम का यह अवतार अपनी अवधि पूरी कर चुका है। जब भी राम के किसी अवतार की अवधि पूरी होने वाली होती है, उनकी अंगूठी गिर जाती है। मैं उसे उठा कर रख लेता हूं। यह सुनकर हनुमान वापस लौट आए।

इस प्रकार इस लोक कथा के अनुसार तो अनेक रामायणों की आवश्यकता “राम के विभिन्न अवतारों” का वर्णन करने के लिए हुई, पर यह जिज्ञासा बनी ही रहती है कि फिर उपलब्ध सभी राम कथाओं की मूल कथावस्तु एक ही क्यों है? लेखक ने भी इसकी कोई चर्चा नहीं की है। हाँ, उसने आश्चर्य के साथ इस तथ्य का उल्लेख अवश्य किया है कि "रामायण" का प्रभाव केवल इस देश में नहीं, बल्कि दक्षिण तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों तक पहुंचा। इसीलिए देशी-विदेशी विभिन्न भाषाओं में अलग-अलग नामों से "रामायण" मिलती है। वास्तविकता यही है कि रामकथा को अपने काव्य का आधार बनाने वाले प्रथम कवि वाल्मीकि अवश्य हैं, पर बाद के कवियों ने वाल्मीकि का अनुकरण करने के बजाय इस कथा में अपनी कल्पना के अनुरूप नए-नए रंग भरे हैं, यही कारण है कि उनमें पर्याप्त अंतर मिलते हैं।

लेखक ने कुछ प्रसंग लेकर इन अंतरों की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास किया है। जैसे, अहल्या संबंधी कथा। (यह ध्यान रखने योग्य है कि वाल्मीकि रामायण में अहल्या की कथा उन्हीं दोनों काण्डों – बालकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड में आती है, जिन्हें प्रक्षिप्त माना गया है।) अपने निबंध में लेखक ने पहले वाल्मीकि रामायण (संस्कृत) और कंबन के रामावतारम (तमिल) के इस कथा से

संबंधित अंश का अंग्रेजी में अनुवाद प्रस्तुत किया है। वाल्मीकि रामायण में अहल्या छद्मवेशधारी इंद्र को आते ही पहचान लेती है, इसके बावजूद रतिक्रिया के लिए उनका निमंत्रण स्वीकार करती है, जबकि रामावतारम में वह बाद में - रतिक्रिया के दौरान उसे पहचान तो लेती है, फिर भी रतिक्रिया से विरत नहीं होती। गौतम मुनि का शाप भी दोनों ग्रंथों में अलग तरह का है। रामायण में वे इन्द्र को अंडकोष विफल होने का शाप देते हैं, और अहल्या को शाप देने के साथ ही स्वयं शापमोचन की बात भी कह देते हैं, जबकि रामावतारम में इन्द्र के शरीर पर सहस्र योनियाँ हो जाने का शाप देते है जिसे बाद में देवताओं की प्रार्थना पर सहस्र आँखें हो जाने में बदल दिया जाता है, और अहल्या जब शापग्रस्त होने पर क्षमायाचना करती है तब उसे शाप मुक्ति का उपाय बताया जाता है।

निबंध में लेखक ने दोनों ग्रंथों की कथा में जो अंतर है, उसे स्पष्ट करते हुए लिखा है, "इन दोनों विवरणों के कुछ अंतरों को देखिए। वाल्मीकि के यहां इंद्र जिस अहल्या का शीलभंग करते हैं, वह स्वयं इच्छुक है। कम्बन के यहां अहल्या यह अनुभव तो करती है कि वह गलत कर रही है, लेकिन वह उस निषिद्ध आनंद को छोड़ भी नहीं पाती क्योंकि पहले ही यह संकेत किया जा चुका है कि उसका विद्वान पति पूरी तरह अध्यात्मलीन है। .....इन्द्र को हज़ार योनियाँ धारण करने का शाप मिलता है, जिसे बदल कर बाद में हज़ार आंखें कर दिया जाता है। अहल्या एक जड़ पत्थर में बदल जाती है। दोनों अपराधियों को दंडित करने वाला काव्यात्मक न्याय (Poetic justice) उनके दुष्कर्मों के अनुरूप है। इंद्र उसी वस्तु के चिह्नों को धारण करते हैं जिसके लिए वे लालायित हो रहे थे, जबकि अहल्या किसी भी चीज़ के प्रति अनुक्रियाशील होने की क्षमता से वंचित कर दी जाती है।"

ऐसा ही एक और प्रसंग सीता के जन्म का देखिए। वास्तविकता तो यह है कि प्रारम्भिक रामकथाओं में इस विषय से सम्बन्धित तथ्यों का अभाव था, अतः बाद के साहित्य में अनेक प्रकार की एक - दूसरी से सर्वथा भिन्न कथाएं (जनकात्मजा, भूमिजा, दशरथात्मजा, रावणात्मजा) प्रचलित हो गईं; पर लेखक ने इस विवाद की कोई चर्चा करने के बजाय एक लोककथा की चर्चा की है जिसमें बताया गया है कि रावण (यहाँ उसका नाम रावुला है) और मंदोदरी संतानहीन हैं, अतः दुखी हैं। वन में जाकर वे दोनों तपस्या करते हैं जहाँ उनकी भेंट एक योगी से होती है जो और कोई नहीं, साक्षात शिव ही हैं। वे रावण को एक चमत्कारी आम देते हैं और पूछते हैं कि इसे पत्नी के साथ कैसे बांट कर खाओगे। रावण कहता है कि इस फल का मीठा गूदा मैं अपनी पत्नी को दूंगा और स्वयं इसकी गुठली चूसूंगा। योगी को संदेह होता है। अतः वह कहता है कि अगर तुम मुझसे झूठ बोलोगे तो अपने कर्मों का फल निश्चित रूप से भोगोगे। वस्तुतः रावण सोचता कुछ और है, पर करता कुछ और है। इसीलिए जब आम खाने की बारी आती है तो वह सारा गूदा स्वयं खा जाता है और मंदोदरी को गुठली देता है। परिणाम यह होता है कि रावण के 'गर्भ ' ठहर जाता है। रावण परेशान है पर गर्भ पलता जाता है और जब शिशु के जन्म का समय आता है तो रावण जोर से छींकता है , बस इसी छींक से जो शिशु बाहर आता है उसे रावण "सीता" नाम देता है। यह लोककथा कर्नाटक में प्रसिद्ध है जहाँ कन्नड़ भाषा बोली जाती है और कन्नड़ में 'सीता' शब्द का अर्थ ही है, "उसने छींका"; जबकि संस्कृत में सीता का अर्थ "हल से बनी रेखा" है। लेखक ने दोनों भाषाओं में सीता शब्द के इस अर्थगत अंतर की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए इसे

ही संस्कृत और कन्नड़ काव्यों में सीता के जन्म संबंधी अलग - अलग कथाओं का आधार बताया है।

रामकथा से संबंधित कतिपय प्रसंगों का तुलनात्मक विवेचन करने के लिए लेखक ने विभिन्न काव्य ग्रंथों (प्रमुख रूप से वाल्मीकि कृत रामायण, कंबन कृत रामावतारम, विमल सूरि कृत पउम चरिय, अध्यात्म रामायण, और स्याम देश की थाई भाषा की राम कियेन) के साथ देश-विदेश में मौखिक रूप से प्रचलित लोक-कथाओं का, विशेष रूप से आदिम जातियों में प्रचलित लोककथाओं का भरपूर सहारा लिया है और आवश्यकतानुसार अपनी टिप्पणियां भी दी हैं। इस तरह, लेखक ने इस वास्तविकता से एक बारफिर हमारा साक्षात्कार कराया है कि हमारे पास वाल्मीकि द्वारा संस्कृत में कही गई एक ही रामकथा नहीं है, बल्कि दूसरों द्वारा कही गई अनेक रामकथाएं भी हैं जिनके बीच अच्छे-ख़ासे अंतर मौजूद हैं।

रामायण को लेकर हमारे समाज की विचित्र स्थिति है। एक ओर तो वह वर्ग है जो राम और अपने-अपने समाज में प्रचलित वर्तमान रामकथा को इतिहास की एक घटना मानता है। उसने जिस भी रूप में रामायण सुनी/पढ़ी है, उसी रूप को ऐतिहासिक मानता है, प्रामाणिक मानता है, वास्तविक मानता है, विश्वसनीय मानता है, अंतिम सत्य मानता है, वेद वाक्य मानता है। प्रचलित रामायण की अतिरंजित - अस्वाभाविक बातों को "भगवान राम" का तथा अन्य पात्रों के दैवीय स्वरूप का प्रताप मानता है। समाज के एक वर्ग के लिए गोस्वामी तुलसीदास केवल कवि - साहित्यकार नहीं, "धर्म गुरु" हैं और रामचरित मानस "धर्म पुस्तक" है। अतः उसमें किसी भी प्रकार का विचलन उसे स्वीकार नहीं है (यह दूसरी बात है कि जब हमारे कथावाचक "अलौकिक तत्व" बढ़ाने वाली कथाएं विभिन्न स्रोतों से लाकर उसमें जोड़ते हैं तो उन्हें सामान्य व्यक्ति अबोध - अज्ञानी बनकर श्रद्धापूर्वक भक्ति भाव से चुपचाप स्वीकार कर लेता है)। संयोग से यह वर्ग संख्या की दृष्टि से बहुत बड़ा है। दूसरी ओर एक वर्ग वह है जो राम और रामकथा को इतिहास की घटना नहीं, पूरी तरह मनगढ़ंत पौराणिक कथा (mythology) मानता है। संख्या की दृष्टि से यह वर्ग भले ही छोटा हो, पर अपने को बुद्धिजीवी मानता है, सुशिक्षित मानता है, और संयोग से वर्तमान एकेडेमिक क्षेत्र में अपना विशेष दखल रखता है। इन दोनों के बीच कई वर्ग हैं। कोई पूरी की पूरी रामकथा को या उसके प्रमुख अंशों को रूपक मानता है और उसकी अपने ढंग से आध्यात्मिक व्याख्या करता है, तो कोई रामकथा को इतिहास की घटना मानते हुए उसके अतिरंजित - अस्वाभाविक तत्वों को प्रक्षिप्त मानता है, इसलिए उन्हें रामकथा से बाहर कर देना चाहता है। इन विरोधों के बावजूद एक ऐसी बात है जो इन सभी वर्गों पर लगभग समान रूप से लागू होती है, और वह यह कि रामकथा से संबंधित मूल ग्रंथों को पढ़ने वाले लोग बहुत कम , लगभग नहीं के बराबर हैं। जिस वाल्मीकि रामायण को रामकथा का आदिग्रंथ कहा जाता है, उसके पढ़ने वाले तो चिराग लेकर ढूँढने पड़ेंगे।

रामानुजन के लेख का विरोध करने वालों का कहना था कि इसमें ऐसी बातें कही गई हैं जो प्रचलित रामकथा से भिन्न हैं। अतः हमारी आस्थाओं पर प्रहार करती हैं। हमारे समाज के एक बहुत बड़े वर्ग ने (इसमें हिदू, मुसलमान, सिख, ईसाई आदि सब शामिल हैं) धार्मिक आस्थाओं के नाम पर सत्य की परख के अपने ऐसे मानदंड विकसित कर लिए हैं जिनका सत्य-असत्य का निर्णय करने के लिए न्याय शास्त्र, मीमांसा शास्त्र आदि में ऋषियों के बताए

"प्रमाणों" से (जो प्रत्यक्ष, अनुमान आदि तीन से लेकर आठ तक हैं) या वर्तमान ऐतिहासिक खोजों से, पुरातत्वीय खोजों से कोई लेना-देना ही नहीं। लगभग दो वर्ष पूर्व तुलसीपीठ चित्रकूट के जगतगुरु रामानंदाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य (संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के स्वर्णपदक विजेता, पी-एच. डी., डी.लिट.) ने जब आठ वर्ष के अनुसंधान के बाद तुलसी कृत रामचरित मानस के उपलब्ध पुराने संस्करणों से एवं हस्तलिखित पांडुलिपियों से मिलान करके वर्तमान प्रचलित संस्करण में 3000 (तीन हज़ार) अशुद्धियों की ओर ध्यान आकृष्ट किया (अशुद्धियाँ विभिन्न प्रकार की मिलीं, जैसे, नई पंक्तियाँ जोड़ दी हैं, अर्थ बदलने के लिए अनेक शब्द बदल दिए हैं आदि) और संशोधित संस्करण (2008) तैयार किया तो उनके कार्य की सराहना करने के बजाय अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद् के महंत ज्ञानदास, राम जन्मभूमि न्यास के नृत्य गोपालदास जैसे तमाम साधु - संत विरोध में खड़े हो गए और न्यायालय तक पहुँच गए (टाइम्स ऑफ़ इंडिया, मुंबई , 1 नवम्बर, 2009 . पृष्ठ 17) स्वामी रामभद्राचार्य जी को अपने कार्य को सही बताते हुए भी “आस्थाओं को आहत करने के लिए" क्षमा मांग कर अपनी जान छुड़ानी पड़ी।

रामानुजन का यह लेख विश्वविद्यालय के “इतिहास” के पाठ्यक्रम में शामिल करने के कारण चर्चा का विषय बना; पर मजेदार बात यह है कि इतिहास की दृष्टि से इसमें कुछ है ही नहीं। इसे पढ़कर रामकथा या उसके विकास के प्रति कोई ऐतिहासिक दृष्टि विकसित नहीं होती। जिन 'रामायणों' की चर्चा इस लेख में की गई है, उनके बारे में यह तक नहीं बताया गया कि उनकी रचना किस कालखंड में हुई। इस लेख में यह तो स्पष्ट किया गया है कि रामकथा कहने वाले बाल्मीकि एकमात्र कवि नहीं हैं, पर यह नहीं बताया कि "रामायण" के सभी उद्गाता (चाहे वे वाल्मीकि हों या कंबन आदि) "कवि" हैं, "साहित्यकार" हैं, “कलाकार“ हैं; “इतिहासकार" नहीं। यह भी नहीं बताया कि जिस मूल घटना को आधार बनाकर इन्होंने अपने - अपने ढंग से काव्य रचना की है, वह घटना (रामानुजन की दृष्टि में) ऐतिहासिक है या नहीं। यह भी नहीं बताया कि जिस राम को वाल्मीकि ने "आदर्श मानव” के रूप में चित्रित किया था, उसे बाद के कवियों ने "भगवान विष्णु का अवतार " क्यों, कैसे और कब बना दिया। यह भी नहीं बताया कि रामकथा के कौन से प्रसंग किन ग्रंथों में मिलते या नहीं मिलते हैं। यह भी नहीं बताया कि रामकथा की ऐसी कौन सी विशेषताएं हैं जिनके कारण यह सभी भारतीय भाषाओं का तो कंठहार बनी ही, भारत के बाहर भी साहित्यकारों को सदियों तक आकर्षित करती रही। इस लेख को पढ़कर रामकथा कहने वाले कुछ कवियों की स्वतन्त्रता (और एक सीमा तक "स्वच्छंदता") का तो पता चल सकता है, पर यह पता नहीं चलता कि इसके लिए उन्होंने "रामकथा" को ही क्यों चुना?

मेरा सुझाव है कि यदि विश्वविद्यालय रामकथा के सम्बन्ध में विद्यार्थियों को प्रामाणिक जानकारी देना चाहता है तो उसे डा. कामिल बुल्के के ग्रन्थ को आधार बनाना चाहिए (डा. बुल्के का मूलग्रन्थ तो हिंदी में है, पर कैनबरा विश्वविद्यालय, आस्ट्रेलिया के प्रो. रिचर्ड बार्ज ने उसका अंग्रेजी में अनुवाद भी किया है)। रामानुजन ने तो केवल कुछ प्रसंगों की जांच - पड़ताल की है, वह भी अधूरी की है; बुल्के ने अपने ग्रन्थ में पूरी रामकथा से संबंधित देश-विदेश में उस समय तक उपलब्ध लिखित-मौखिक सभी प्रकार की सामग्री का व्यवस्थित ढंग से उपयोग किया है, और तर्कसंगत निष्कर्ष निकाले हैं। उसका अध्ययन करने

से राम और रामकथा का इतिहास भी पता चलता है और यह भी पता चलता है कि किन कवियों ने अपनी किस प्रकार की कल्पनाओं से उसे कब - कब नया रूप दिया। पाठक के मन में कोई दुविधा नहीं रहती , और हर चित्र स्पष्ट होता जाता है। रामानुजन के लेख को पढ़ने के बाद मैं तो यही कहूँगा कि बुल्के का ग्रन्थ आज भी "रामकथा संबंधी समस्त सामग्री का विश्वकोष है" ।

एडिसन हिंदी पाठशाला में दीपावली पर लिए हुए कुछ चित्र

हनुमान चालीसा चौपाई

व्याख्याकार: स्वामी डॉ. रामकमल दास वेदांती जी महाराज

संकलन: अर्चना कुमार

सहस बदन तुम्हरो जस गावैं।

अस कहि श्रीपति कंठ लगावैं।।१३।।

अर्थ - सहस वदन शेष नाग जिसने पृथ्वी को धारण कर रखा है, जिसके हजार मुख हैं, दो हजार जिह्वा हैं, 'वह आपकी स्तुति करते हैं। ऐसा कह कर श्रीपति राम जी ने हनुमान जी को गले लगाया।

सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा।

नारद सारद सहित अहीसा॥१४॥

जम कुबेर दिगपाल जहांते।

कबि कोबिद कहि सके कहांते॥१५॥

अर्थ - सनक, सनंदन, सनत्कुमार, सनातन, सृष्टि कर्ता ब्रह्मा के चारों मानसिक पुत्र ब्रह्मा, विष्णु, महेश, उत्पति, स्थिति प्रलय करने वाले सृष्टि के स्वामी, वशिष्ठ, अगस्त्य, लोमश आदि दीर्घायु वाले जो सदा ब्रह्म तत्व में लीन रहते हैं, नारद ब्रह्मा के मानस पुत्र जो प्राणी मात्र के हित के लिए सदा भ्रमण करते रहते हैं, सारद सम्पूर्ण संसार की बुद्धि प्रदाता हैं, के सहित सृष्टि को धारण करने वाले शेषनाग। ये सभी और शेषनाग, यमराज, कुबेर और समस्त दिगपाल भी आपकी प्रशंसा करनेमें असमर्थ हैं। फिर सांसारिक कवि और विद्वान आपके यश का वर्णन पूरी तरह कैसे कर सकते हैं।

विजय सिंह राठौर

विजय सिंह राठौर जी पिछले दो वर्षों से हिंदी यू.एस.ए. के साथ शिक्षक के रूप में जुड़े हुए हैं। इन्हें सदा से ही पढ़ाने में रुचि रही है। सूचना और तकनीक के क्षेत्र से पिछले उन्नीस वर्षों से जुड़े हुए हैं। अपना कैरियर संगणक शिक्षा केंद्र से ही आरम्भ किया और भारत में NIIT, APTEC और IBM जैसे शिक्षा संस्थानों में सूचना और तकनीक के छात्रों को लगभग सात वर्षों तक पढ़ाया है। पिछले बारह वर्षों से सॉफ्टवेयर अभियन्ता के पद पर कार्यरत हैं और आज कल चल दूरभाष के सॉफ्टवेयर योजना में संलग्न हैं।

मेरा अनुभव

आज सुबह से ही बहुत तेज बारिश हो रही है। हवाएँ बहुत तेज वृक्षों को चीर कर निकलती जा रही हैं। वृक्ष भी जैसे झूम-झूम कर हवाओं के साथ नृत्य कर रहे हों। चारों ओर सैंडी तूफ़ान के चर्चे चल रहे हैं। सभी न्यूज़ चैनल सैंडी को ही कवर कर रहे हैं। कहते हैं कि सैंडी इस सदी का सबसे भयंकर तूफ़ान है। हमारी कुशलता पूछने के लिए परिवार जनों और मित्रों के फ़ोन लगातार आ रहे हैं। बच्चों के स्कूल की छुट्टी कर दी गयी है। बच्चे बहुत ही प्रसन्न्ता से स्कूल की छुट्टी का आनंद उठा रहे हैं। हमारा ऑफिस भी बंद है और सबको घर से काम करने के लिए बोल दिया गया है। बैठे-बैठे विचार आया कि अपने बेटे को हिंदी का काम करवा दिया जाए। मेरा सबसे छोटा बेटा हिंदी यू.एस.ए. की पाठशाला में हिंदी पढ़ना और लिखना सीख रहा है। हिंदी सीखते समय उसका उत्साह देखते ही बनता है। अचानक मेरे दिमाग में उस समय की झलक घूम गयी, जब मेरे बच्चे न ही हिंदी बोल पाते थे और न ही समझ पाते थे। समय का झोंका हवा की भाँति मुझे दस वर्ष पीछे ले गया।

हमारे बच्चे सन २००१ में अमेरिका आये थे। जैसा कि अधिकतर लोग करते हैं, सबकी देखा देखी हम लोगों ने बच्चों से अंग्रेजी में बात करना आरम्भ कर दिया। झूठ नहीं बोलूँगा, परन्तु उस समय बच्चों को अंग्रेजी बोलते देख बहुत गर्व सा महसूस होता था। परन्तु दो तीन वर्षों में ये समझ आया कि बच्चे हमारी मातृ भाषा हिंदी को तो बिल्कुल भी समझ नहीं पा रहे हैं। असली समस्या तब आती थी जब बच्चे दादा-दादी और अन्य परिवार जनों से भारत में फ़ोन पर बात करते थे। अब तो हमने बच्चों को हिंदी बोलना और लिखना सिखाने का निश्चय कर लिया जो कि बहुत ही आवश्यक था।

हमें सबसे पहला अवसर मिला जब कुछ समय पश्चात बच्चों के दादा-दादी हमसे मिलने अमरीका आये। बच्चे अपनी दादी जी को अम्मा जी पुकारते हैं। बच्चों के दादा जी को तो अंग्रेजी समझ आती है, परन्तु अम्मा जी को इतनी अच्छी अंग्रेजी नहीं आती। अब असली समस्या आरम्भ हुई। प्रारम्भ में बच्चों की अम्मा जी के साथ बातचीत बहुत सीमित होती थी। अम्मा जी बच्चों से बात करने के नए-नए तरीके ढूँढने लगीं। अम्मा जी बच्चों के लिए एक "दादा-दादी की कहानियाँ" नाम की पुस्तक ले कर आयी थीं। उन्होंने धीरे-धीरे उस पुस्तक से बच्चों को कहानियाँ सुनाना आरम्भ किया। पहले तो बच्चों को कहानी समझने में कुछ समय लगा, परन्तु धीरे-धीरे उन्हें कहानियाँ सुनने में आनंद आने लगा। अब तो वे लोग प्रत्येक शाम

की प्रतीक्षा करने लगे। हर शाम एक नयी कहानी बच्चों को सुनाई जाती। कभी चूहे राजा की कहानी तो कभी राजा रानी की कहानी। कभी रामायण और कभी कृष्ण भगवान की कहानी। धीरे-धीरे वे कहानियों द्वारा अपनी हिन्दू सभ्यता और संस्कृति के बारे में समझने लगे। उनकी उत्सुकता दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी। रामायण, महाभारत और अन्य काव्यों के बारे में उन्हें जानकारी मिलने लगी। आश्चर्य की बात तो ये है कि बच्चे धीरे-धीरे हिंदी बोलने का प्रयास भी करने लगे। दादी जी ने अपने पोती-पोतियों के लिए नियम बना दिया कि वे उनसे हिंदी में ही बात करेंगे। आरम्भ में तो बच्चे उनसे हिंदी में बोलने में हिचकिचाते थे, परन्तु धीरे-धीरे वे हिंदी में ही बात करने लगे, हालांकि बहुत गल्तियाँ करते थे। हम सब उनकी गल्तियों से परिपूर्ण हिंदी सुन कर बहुत प्रफुल्लित हो उठते। बच्चे बचपन से ही बहुत जिज्ञासु प्रवृति के होते हैं। इसी जिज्ञासु प्रवृति के कारण कोई भी नयी भाषा सीखना उनके लिए सरल होता है। उधर बच्चों के दादू जी को हिंदी चलचित्र देखने की बचपन से ही बहुत रुचि रही है। जब भी वे कोई हिंदी चलचित्र देखते बच्चे भी उनके साथ बैठ जाते। हिंदी चलचित्र देखने से बच्चों को बहुत ही जल्द हिंदी समझ आने लगी। अब तो बच्चे भी हिंदी चलचित्र देखने के लिए स्वयं ही आग्रह करने लगे।

दादू और अम्मा जी कुछ पाँच महीने अमेरीका में रहे। इस दौरान बच्चों को हिंदी समझ आने लगी और वे बहुत अच्छी हिंदी बोलने भी लगे। हमने भी घर में एक नियम बना लिया कि हम सब केवल हिंदी में ही बात करेंगे। हमारा अगला उद्देश्य था बच्चों को हिंदी लिखना सिखाना। इस समस्या को सुलझाने में हिंदी यू.एस.ए. का बहुत बड़ा हाथ रहा। इस अनुभव का व्याख्यान अगले अंक में ...

फ्लोरिडा हिंदी पाठशाला में पढ़ने वाले बच्चों द्वारा, रचिता जी को भेजी गई दिवाली की शुभकामनाएँ

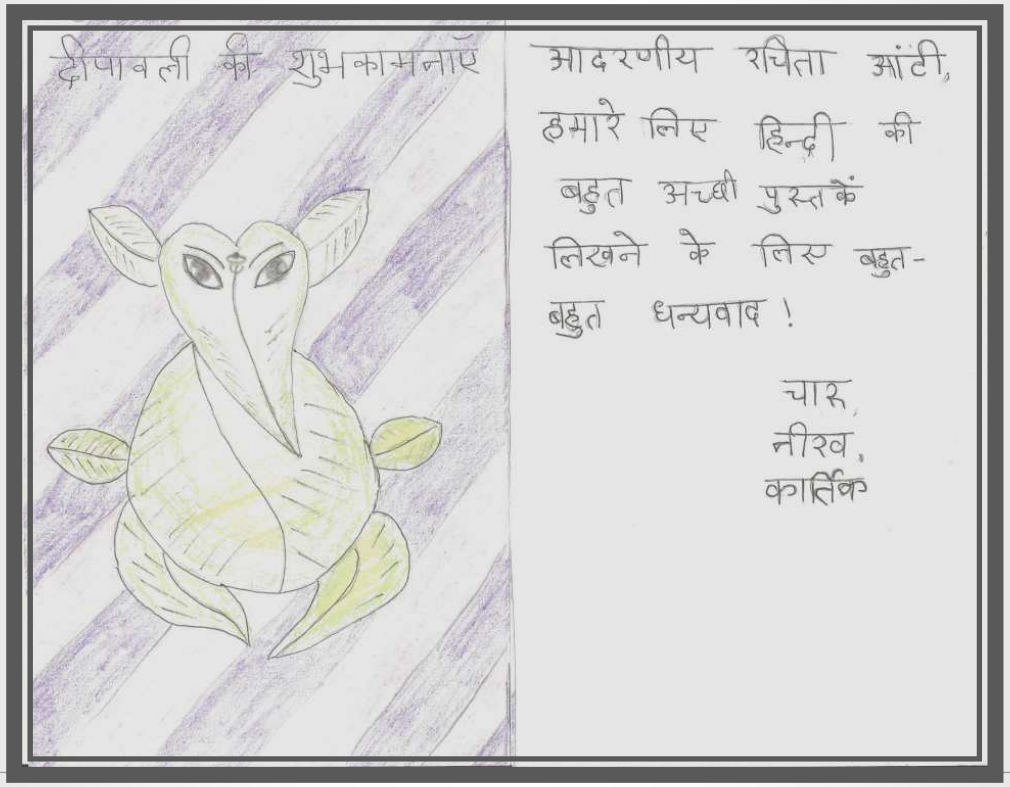

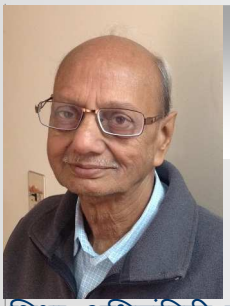

हिन्दी यू.एस.ए. की पाठशाला में पहला दिन

रामपाल अग्रवाल

शिक्षा: अभियांत्रिकी में उत्तर-स्नातक, मैनेजमेंट में डिप्लोमा, निवास: नागपुर
पेशे से सिविल इंजिनियर, फ़रवरी 1997 में सरकारी उपक्रम कोल इंडिया से मुख्य अभियंता के पद से सेवा-मुक्त। संस्कृत भाषा की वरद पुत्री हिन्दी से स्वाभाविक स्नेह। यदा-कदा हिन्दी में तकनीकी एवं ललित लेख प्रकाशित। अध्यात्म और सत्संग में रूचि। कुछ सामाजिक और तकनीकी संस्थाओं से सम्बद्ध।

कई वर्षों से हमारे सुपुत्र, बहू और दो बच्चे अमेरिका में हैं। एडिसन में इनका अपना घर है। अपनी संस्कृति और भाषा से किस प्रकार ये जुड़े रहें, इस विचार को लेकर कुछ चिंता थी। पर इस समस्या का समाधान हमारी बहू सीमा ने खोज लिया। हिन्दी यू.एस.ए. नामक संस्था से जुड़ गईं। दोनों बिटियाँ (अपूर्वा और शिखा) साप्ताहिक हिन्दी कक्षा में जाने लगीं और बहू सीमा भी स्वयंसेविका बनकर वहाँ पढ़ाने लगीं।

हम नागपुर (भारत) में रहते हैं। नागपुर से दूरभाष पर आये दिन इन सबसे बातचीत होती थी। बातचीत का एक बिंदु अपनी भाषा में बच्चों की निरंतर प्रगति भी रहता। टूटी-फूटी ही सही, बच्चे हिन्दी सीख रहे थे।

इसी बीच हम पति-पत्नी यहाँ आए। घर पर कर्मभूमि नामक त्रैमासिक पत्रिका देखी। हिंदी यू.एस.ए. की यह पत्रिका बहुत सुन्दर और ज्ञानवर्धक लेखों से भरपूर है। श्री देवेन्द्र सिंह जी का, जो इस संस्था के संस्थापक और मुख्य संचालक हैं, भगीरथ प्रयास अत्यंत सराहनीय है।

सीमा ने बताया कि १४ सितम्बर से हिन्दी कक्षाएँ शुरू होंगी, तो इनका और परिचय प्राप्त करने के लिए मन बहुत लालायित था। शाम को सात बजे के करीब हम स्कूल में पहुँचे। पिस्कैटवे हाई स्कूल के प्रांगण में हिन्दी कक्षाएँ आयोजित होती हैं। पहुँचते ही इस केंद्र के संचालक श्री दीपक लाल जी ने गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया। उनकी पत्नी नूतन जी ने भी मुस्करा कर अभिवादन किया।

हिन्दी पाठशाला में उत्सव जैसा वातावरण था। माँ-बाप अपने-अपने बच्चों को ला रहे थे। संचालक महोदय से प्रारंभिक शिष्टाचार के बाद बच्चों को उनकी कक्षा में छोड़ देते थे। रंग-बिरंगे परिधानों में सब बहुत सुन्दर दिख रहे थे। सभी प्रसन्न-मुद्रा में थे। बच्चे जब तक अपनी कक्षा में थे, तब तक उनके अभिभावक इधर-उधर घूम फिर रहे थे। इसी पाठशाला में बाहर मैदान में खेल-कूद का रंगा-रंग प्रोग्राम चल रहा था। कुछ लोग उसका भी आनन्द ले रहे थे। इसी तरह १-२ घंटे का समय कैसे बीत गया, पता ही नहीं चला। श्री दीपक लाल जी को धन्यवाद देकर हम घर लौट आये।

रात में सोते समय, हिन्दी पाठशाला का सुन्दर कार्यक्रम ही मानस-पटल पर छाया रहा। भारत के विभिन्न प्रदेशों से यहाँ आकर अपनी भारतीय पहचान कायम रखने के लिए प्रवासी जन किस प्रकार से संगठित हो रहे हैं, यह देख कर बहुत प्रसन्नता हुई। भारत से बाहर एक लघु भारत का स्वरुप था। इस सारे कार्य को मूर्त-रूप देने के लिए संस्थापक महोदय और उनकी पूरी टीम बहुत अधिक बधाई के पात्र हैं। इनके अथक और नि:स्वार्थ प्रयासों की जितनी भी प्रशंसा की जाए, कम है।

ऐसे विचार मंथन में कब नींद आ गई, पता ही नहीं चला। सुबह उठा, तो वही सुन्दर विचार मन को प्रफुल्लित कर रहे थे।

गाँधी जी

मेरा नाम चारु चतुर्वेदी है। मैं ग्यारह वर्ष की हूँ और पाँचवी कक्षा की विद्यार्थी हूँ। मुझे भारत और हिंदी से बहुत प्रेम है। मैं तीन वर्ष की उम्र से हिंदी सीख रही हूँ और अब जैक्सनविल हिंदी पाठशाला की स्वयंसेविका हूँ।

पिछले महीने महात्मा गाँधी जयंती थी। इस अवसर पर मैंने उनका चित्र बनाया जो सलंग्न है। गाँधी जी की सादगी ने बहुत लोगों को प्रभावित किया है। उनके जीवन से एक प्रेरक प्रसंग लिख रही हूँ।

उन दिनों भारत पर अंग्रेजों का शासन था। भारत के भविष्य पर बातचीत करने के लिये अंग्रजों ने अगस्त १९३१ में लन्दन में गोल मेज सम्मेलन का आयोजन किया। गाँधी जी उस में भाग लेने के लिए गए। लन्दन के समाचार पत्रों में गाँधी जी के सादा वस्त्रों और शाकाहारी आहार के बारे मे बहुत लिखा गया था। सम्मेलन में गाँधी जी सादा धोती, दुशाला और चप्पल पहन कर गए जबकि अन्य लोग बहुत महँगे और शानदार वस्त्र पहन कर आये थे। सम्मेलन के बाद एक पत्रकार ने गाँधी जी से पूँछा कि जब वह अंग्रेज राजा से मिले तो क्या उन्हें अपने वस्त्रों में कोई कमी लगी। गाँधी जी ने उत्तर दिया कि राजा ने इतने वस्त्र पहने थे वह उन दोनों के लिये पर्याप्त थे। उस सम्मेलन के बाद बहुत लोग उन के प्रशंसक हो गये।

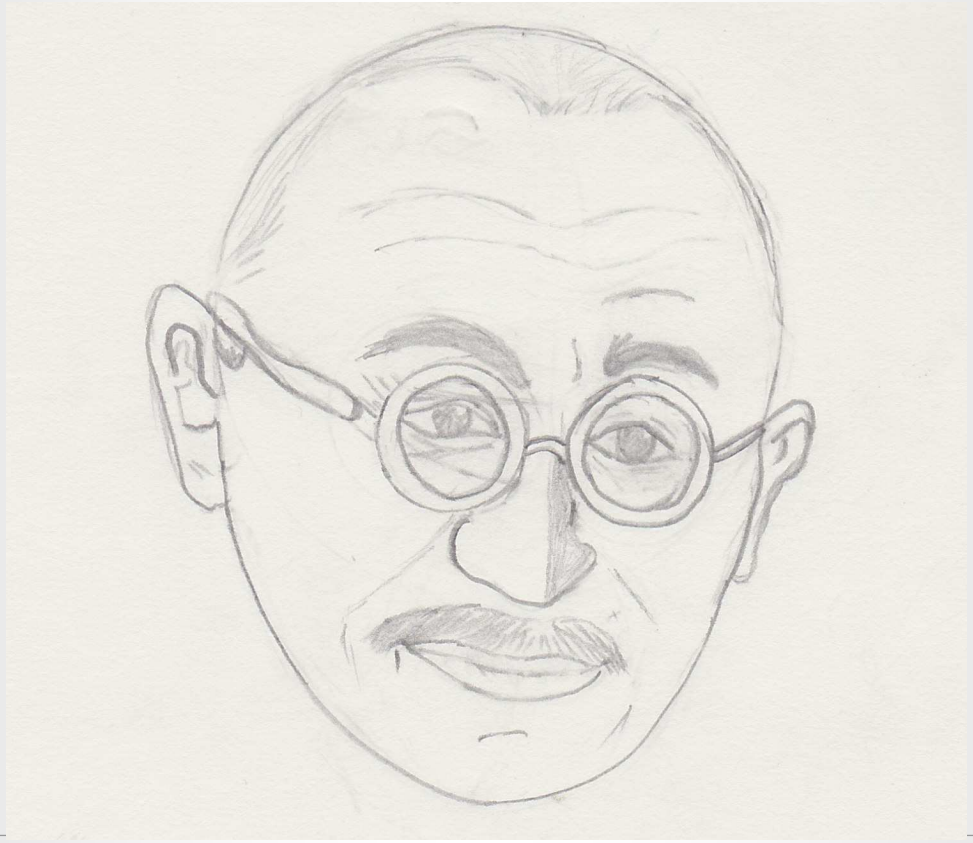

हमारा ग्रीष्मकालीन अवकाश

हमारे चैरी हिल के मध्यमा - 2 के विद्यार्थियों ने अपनी ग्रीष्मकालीन अवकाश के कुछ अंशों को अपनी लेखनी में बाँधने का प्रयास किया है। आशा है इन लेखों से दूसरे बच्चे भी प्रेरणा लेकर कर्मभूमि के लिए लेख लिखेंगे। सब से अच्छी बात यह है कि इन लेखों का बच्चों ने स्वयं ही टंकण किया है। इन विद्यार्थियों की उम्र 12 वर्ष से कम है। हम व्यस्कों को इन से प्रेरणा लेनी चाहिए।

मेरा नाम अदिति लोहटिया है। मैं बारह वर्ष की हूँ, और मैं सातवीं कक्षा में पढ़ती हूँ। मैं चैरी हिल में रहती हूँ। मुझे नृत्य सीखना और टेनिस खेलना अच्छा लगता है।

पिछले सप्ताह मैं दक्षिण कैरोलिना और सेवानह, जॉर्जिया गई थी। हमने शाम को छ: बजे अपनी यात्रा शुरू की। हम शनिवार को पाँच बजे दक्षिण कैरोलिना के एक होटल में पहुँचे। होटल समुद्र तट पर था, और समुद्र तट पर लहरें बहुत छोटी थीं। होटल में तीन तैरने वाले पूल थे। हम पूल में तैरने चले गए। रात का खाना खाने के लिए हम भोजनालय गए। रविवार की सुबह हम फिर से समुद्र तट पर गए, और हमें चार डॉल्फिन देखने को मिलीं। शाम को हम सेवानह, जॉर्जिया के लिए निकल पड़े। वहाँ मैंने सेवानह नदी पर बड़े-बड़े जहाज देखे। सोमवार को हम सेवानह के ऐतिहासिक संग्रहालय देखने गए और फिर शाम को हम घर के लिए निकल पड़े। हमें यह यात्रा सदैव याद रहेगी।

मैं प्रणय जग्गी (उम्र ९ वर्ष) वूरहीस के क्रेस्सेन एलेमेन्टरी विद्यालय में पाँचवी कक्षा में पढ़ता हूँ। मेरे सबसे प्रिय विषय गणित और विज्ञान हैं। ये दोनों विषय मुझे बहुत रोचक लगते हैं। मुझे व्यायाम करना भी बहुत अच्छा लगता है क्योंकि व्यायाम करने से शरीर चुस्त और फुर्तीला रहता है। मुझे अपने मित्रों के साथ सभी तरह के बाहर के खेल खेलना पसंद हैं। खाली समय में मुझे कहानियाँ पढ़ना और चित्र बनाना अच्छा लगता है। मुझे अपने छोटे भाई अंश के साथ खेलना और उसे पढ़ाना भी बहुत अच्छा लगता है।

इस वर्ष २०१२ की गर्मियों की छुट्टियों में मैं अपने परिवार के साथ भारत गया था। सबसे पहले हम लखनऊ गए। वहाँ मैं अपने दादा जी, दादी जी और नानी जी से मिलकर बहुत खुश हुआ। लखनऊ में मैंने वहाँ की मशहूर चाट और कुल्फी खायी। मुझे कुल्फी बहुत स्वादिष्ट लगी और फिर मेरे पिताजी मुझे प्रतिदिन कुल्फी खिलाने ले कर जाते थे। मैं अपने दादाजी के साथ हर सुबह दूध लेने जाता था। शाम को मैं अपने पिताजी के साथ छत पर पतंग उड़ाता था। पतंग उड़ाने में मुझे बहुत आनंद आया। रंग बिरंगी पतंगें आकाश में बहुत सुंदर लगती थीं। चार हफ्ते लखनऊ रहने के बाद हम लोग रेलगाड़ी से कोलकत्ता गए। रेल गाड़ी में यात्रा करना मुझे बहुत अच्छा लगा। हवाई जहाज़ की खिड़की से बाहर देखो तो बादलों के अलावा कुछ भी दिखाई नहीं देता परन्तु रेलगाड़ी की खिड़की से बाहर देखना कितना अच्छा लगता है। कितने सुंदर खेत खलिहान, तरह-तरह के जानवर दिखाई देते हैं। कोलकत्ता में मैं अपने मामाजी, मामीजी और बहनों से मिला और उनसे मिल कर मुझे बहुत अच्छा लगा। मेरे मामाजी भारतीय वायुसेना में हेलीकाप्टर विमान चालक हैं। उन्होंने मुझे बहुत तरह के विमान दिखाए और उनके बारे में जानकारी दी। प्रतिदिन शाम को मैं अपनी बहनों के साथ साइकिल चलाता और खेलने जाता था। कोलकत्ता में हमने बहुत सुंदर और विशाल ऐतिहासिक इमारतें देखीं पर सबसे अच्छा मुझे संगमरमर पत्थर से बना हुआ विक्टोरिया मेमोरिअल लगा। बंगाली मिठाइयाँ पूरे भारत में मशहूर हैं। मैंने बहुत तरह की मिठाइयाँ खाईं पर मुझे सबसे स्वादिष्ट बंगाली रसगुल्ला लगा। दो हफ्ते कोलकत्ता रहने के बाद हम लोग अमेरिका वापस आ गए।

मैंने अब की बार भारत में देखा कि वहाँ पर हर प्रान्त की भाषा, वेशभूषा, खानपान भिन्न है इसीलिए भारत में इतनी विविधता है। वहाँ के लोग भी बहुत मिलनसार और अच्छे हैं। मैं अपनी इस भारत यात्रा को कभी नहीं भूलूँगा।

मेरा नाम सुधीश देवाडिगा है। मैं पाँचवीं कक्षा में पढ़ता हूँ। मेरा प्रिय खेल फुटबॉल है। मुझे खाली समय में ओरगामी बनाना, पुस्तक पढ़ना, और पियानो बजाना पसंद है। मेरा मनपसंद व्यंजन समोसा के साथ मीठी चटनी है। मुझे बहुत खुशी है कि मैं हिंदी पढ़-लिख सकता हूँ।

मैं गर्मी के छुट्टियों में भारत गया था। हम सब बहुत उत्साहित थे। मैं इसलिए उत्साहित था क्योंकि मैं जब तीन साल का था, तब मैं अमेरिका आया था। मैं भारत की सभी यादें भूल गया था। सब को मिलने और देखने का मौका मिल रहा है यह सोचकर मन बहुत खुश था। मैंने पाठशाला से आते ही अपनी पेटी में सामान रख दिया। मैंने अपने कपड़े, दातुन, मंजन, साबुन, तौलिया, कंघा, कुछ किताबें तथा पारपत्र पेटी में रख दिया।

हम लोग वूरहीस से हवाई अड्डे तक टैक्सी से गए। वहाँ से हम युनाइटेड एअरवेस□के हवाई जहाज में बैठे। हवाई जहाज बहुत बड़ा था। मैं अपने पिताजी के साथ खिड़की के पास वाली सीट में बैठा था। हवाई जहाज का भारतीय भोजन बहुत स्वादिष्ट था। मैंने रोटी, आलू मटर की सब्जी, तथा श्रीखंड खाया। पंद्रह घंटे यात्रा करने के बाद हम लोग मुंबई छत्रपति शिवाजी हवाई अड्डे पहुँच गए।

मेरे दादाजी और दादीजी ने मुझे आशीर्वाद दिया। मैं अपने चार चाचाजी और चार चाचीजी से मिला। मैंने उनके बच्चों के साथ खूब मस्ती की। मैंने उनको खिलौने और अमेरिका की चॉक्लेट उपहार के रूप में दी। मुंबई से नासिक बस यात्रा करके हम मौसी के घर गए। मुझे नासिक बहुत पसंद आया। मुझे अपनी मौसी के बेटे और बेटी के साथ खेलने में बहुत मजा आया। हम नासिक से शिर्डी भी गए। शिर्डी में साईंबाबा के दर्शन किये।

बाद में मैं मंगलूर, कर्नाटक रेल यात्रा करके गया। सैयाद्री पहाड़ का दृश्य बहुत सुंदर था। वहाँ मेरे नाना, नानी, तथा मामा रहते हैं। वहाँ बहुत सारे पेड़ थे। मैंने नारियल, आम, पपीता, अमरूद, तथा केले के पेड़ देखे। मैंने बहुत सारे मंदिरों के दर्शन भी किये। मैं बहुत खुश हुआ। मुझे अपने मामा की सगाई में जाने का अवसर मिला। मैंने बहुत सारे व्यंजन खाये। मैंने घर आकर नारियल का पानी और मलाई खायी। मेरी नानी के घर तीन बिल्लियाँ हैं। मैं उनके साथ बहुत खेला। मुझे बहुत मजा आया। मैं और मेरी बहन भांडुप गए। वहाँ मेरे मौसा, मौसी, ममेरा भाई तथा ममेरी बहन रहते हैं। हम ने वहाँ चौदह दिन मस्ती की। मुझको भारत की यात्रा बहुत अच्छी लगी।

बच्चों की कलम से

वुडब्रिज हिंदी पाठशाला की संचालिका होने के साथ-साथ मैं उच्च स्तर-2 की शिक्षिका भी हूँ। हिंदी यू.एस.ए. का कर्मभूमि पत्रिका को प्रकाशित करने का उद्देश्य था, अमेरिका में पले बड़े बच्चों को व उनके अभिभावकों को हिंदी पढ़ने व लिखने के लिए प्रेरित करना। आज, यह देखते हुए बहुत ही गर्व की अनुभूति हो रही है, कि हम अपने उद्देश्य की पूर्ति की ओर निरंतर अग्रसर हैं। जब हम लेख या कहानी लिखने की बात करते हैं, तो मन में विचार आता है कि हम लेखक या कहानीकार तो नहीं हैं, तो हम लेख कैसे लिख सकते हैं। परंतु जब मैंने अपनी ही कक्षा में बच्चों से बात करते हुए यह एहसास करवाती हूँ कि आप लिख सकते हैं, जो भी बात आप कर रहे हैं, लिख दीजिए यही आपका लेख हो जाएगा तो बच्चे बहुत आश्चर्य चकित हो जाते हैं, वे ऐसा ही करते हैं।

यहाँ बच्चों द्वारा राखी और दिवाली के बारे में बताया गया है। कभी पढ़कर अटपटा सा भी लगता है, कि यह जानकारी तो हमें पहले से ही है फिर इस लेख का क्या औचित्य। परंतु सराहनीय बात यह है कि बच्चे हिंदी सीख रहे हैं व अपने अनुभव, विचार हिंदी में लिख रहे हैं। हमारे लिए यह एक सुखद अनुभूति है।

– अर्चना कुमार

सहज स्वभाव की मोक्षा सेठ 14 वर्ष की हैं और नवमी कक्षा में पढ़ती हैं। पिछले चार वर्षों से वुडब्रिज हिंदी पाठशाला में आ रही हैं। पढ़ाई के अलावा इन्हें संगीत में बहुत रुचि है। हिंदी यू.एस.ए. के द्वारा आयोजित कविता प्रतियोगिता व हिंदी महोत्सव में प्रतिवर्ष हर्षोल्लास से भाग लेती हैं। वुडब्रिज हिंदी पाठशाला में भी सहायता के लिए सदा तत्पर रहती हैं।

जो प्यार एक भाई और बहन के बीच होता है वह शब्दों में नहीं कहा जा सकता है। राखी इसी सुंदर रिश्ते के स्नेह को प्रदर्शित करने का एक त्यौहार है। यह रीति बहुत वर्षों से चली आ रही है। राखी को रक्षा बंधन के नाम से भी पुकारा जाता है। जैसा कि नाम से प्रतीत होता है, रक्षा का बंधन। बहन भाई को राखी बाँधती है, व भाई जीवन भर बहन को उसकी रक्षा करने का वचन देता है।

पहले जमाने में एक रानी दूसरे राजाओं को राखी भेजती थी। एक कहानी में बताया गया है कि एक पत्नी ने शत्रु राजा को राखी बाँधी तो उसने उसके पति को नहीं मारा। मैंने एक बार एक कहानी में पढ़ा था कि सिकंदर की मंगेतर ने राजा पोरस को राखी भेजी थी। जब सिकंदर और पोरस की लड़ाई हुई तो सिकंदर पोरस के भाले के सामने था, परंतु राजा पोरस(पुरु) ने उसे नहीं मारा क्योंकि उन्हें याद था कि इसकी मंगेतर ने मुझे राखी बाँधी है और उसके सुहाग की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है।

भारत और अमेरिका में यह त्यौहार बहुत धूम-धाम से मनाया जाता है। सुबह-सुबह सब लोग स्नान कर के नये कपड़े पहनते हैं। मंदिर जाते हैं। पूजा कर के बहन भाई को टीका करती है, जिसमें फूल, चावल, कुमकुम और केसर मिला होता है। टीका करने के बाद बहन भाई को और भाई बहन को मिठाई खिलाते हैं।

उसके बाद सारा दिन परिवार के सभी लोग एक साथ बैठ कर मौज मस्ती करते हैं।

राखी केवल मौज मस्ती के लिए नहीं होती। यह हमें एहसास दिलाती है कि परिवार के लोग हमारे लिए कितने महत्वपूर्ण हैं। हमारे ऊपर कभी भी कोई भी मुसीबत आए यो परिवार के लोग सदा हमारा साथ देते हैं। हमारे साथ खड़े रहते हैं। परिवार हमें सुरक्षा देता है। हमें सदा परिवार के सदस्यों का सम्मान करना चाहिए और ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिए।

अनुभव वातल छठी कक्षा में पढ़ते हैं। हिंदी यू.एस.ए. की वुडब्रिज पाठशाला में उच्च स्तर-2 के विद्यार्थी हैं। अनुभव को पुस्तकें पढ़ना, टैनिस खेलना व कम्प्यूटर पर काम करने में बहुत रुचि है। गणित की विशेष कक्षा में भी जाते हैं, व अपने छोटे भाई का बहुत अच्छे से ध्यान रखते हैं।

मैं जब नौ साल का था तो मैं भारत जाने के बारे में सोच रहा था। एक दिन मेरी माँ ने मुझे बताया कि हम दो सप्ताह बाद भारत जाएँगे। मैं यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ। दो सप्ताह बाद हम तैयार हुए और अपने सामान के साथ एयरपोर्ट जाने के लिए कार में बैठे। एक दिन बाद मैं भारत पहुँचा। हम पहले विमान से दिल्ली पहुँचे, फिर वहाँ से इलाहाबाद गए। इलाहाबाद पहुँच कर मैं अपने दादा-दादी के घर गया, और उनसे मिलकर बहुत खुश हुआ। दादी ने मेरे लिए मटर-पनीर बनाया। उसके बाद मैं थोड़ी देर खेलकर सोने गया।

मैंने पिछले साल दिवाली भारत में मनाई। दिवाली में हम वहाँ बहुत मजे करते हैं। मैं अपनी माँ के साथ पटाखे खरीदने के लिए जाते हैं। हम बहुत सारे पटाखे खरीदते हैं। हम फिर मिठाई की दुकान पर जाते हैं। मेरी माँ बाहर रंगोली बनाती है। उसके बाद हम रात का इतंजार करते हैं। रात को हम पटाखे जलाते हैं। घर में पूजा करने के बाद हम मेरे दादा जी के साथ उनकी दुकान पर जाते हैं। वहाँ पर हम पहले पूजा करते हैं और हम सारे लोग जो दुकान पर काम करते हैं, उन्हें उपहार देते हैं। दुकान से हम बाहर खाना खाने के लिए चले जाते हैं। भोजनालय में मैं हमेशा मटर-पनीर मँगवाता हूँ।

हम घर जाने के रास्ते में बाहर दूसरे लोगों के घर के आगे बनी रंगोली देखते हैं, ताकि अगले साल के लिए हमें पता चल जाए कि हम कैसे रंगोली बनाएँ।

मैं इलाहाबाद में रोज सुबह छः बजे उठ जाता हूँ और रोज़ वहाँ अपनी एक कक्षा में जाता हूँ जहाँ मेरे दादा जी मुझे छोड़ते हैं। कक्षा के बाद मैं दादा जी की दुकान पर जाता हूँ। वहाँ मैं हर दिन सोडा और चिप्स खरीदता हूँ। उसके बाद मैं घर जाकर अपना गृहकार्य करता हूँ। फिर मैं बाहर जाकर खेलता हूँ। घर आ कर मैं संगणक पर खेलता हूँ और खाना खाकर सो जाता हूँ।

मुझे इलाहाबाद जाना बहुत अच्छा लगता है। वहाँ दादा जी की दुकान पर जाना, उनके साथ बात करना, और दुकान के साथ वाले रेस्टोरेंट में खाना खाना अच्छा लगता है। मैं जब वहाँ गया तो दुकान पर काम करने वाले लोग बार-बार मेरे से क्रिकेट मैच का स्कोर पूछते थे, और मैं उन्हें टी. वी. में से स्कोर देखकर बता देता। मैं इस वर्ष दिसम्बर में इलाहाबाद जा रहा हूँ, इसीलिए बहुत खुश हूँ।

अक्षय खन्ना छठी कक्षा में एडिसन की पाठशाला में पढ़ते हैं। अक्षय बचपन से ही घर में अपने परिवार के साथ हिंदी में बात करते हैं। इन्हें इतिहास पढ़ने में तथा हिंदी व अंग्रेज़ी की पुस्तकें पढ़ने में विशेष रुचि है। गणित और विज्ञान इनके प्रिय विषय हैं।

दीपावली भारत का सबसे बड़ा त्यौहार माना जाता है। इसे प्रकाश का त्यौहार भी कहा जाता है। यह अंधेरे को दूर हटाने का प्रतीक है। भारत में सभी लोग इसे बहुत धूमधाम से मनाते हैं। दीपावली के कुछ दिन पहले ही सब बाज़ार और घरों को सजाया जाता है। लोग मिठाई, पटाखे और उपहार खरीदते हैं। लोग अपने रिश्तेदारों और दोस्तों को मिठाई और उपहार बाँटते हैं। इस दिन राम जी ने अत्याचारी रावण को मारकर सीता माता सहित अयोध्या लौटे थे। अयोध्या में लोगों ने श्री राम के स्वागत में दिए जलाए, घरों को सजाया, क्योंकि वे बहुत खुश थे। दीपावली वाले दिन लोग नए वस्त्र पहनते हैं। शाम को घर के बाहर दिए और मोमबत्ती जलाते हैं। बच्चे और बड़े सब मिलकर पटाखे और आतिशबाजी चलाते हैं। घर में लक्ष्मी जी की पूजा होती है।

अमेरिका में रहने वाले भारतीय लोग भी इस त्यौहार को मनाते हैं। अमेरिका में हमें दिवाली की छुट्टी नहीं होती, परन्तु फिर भी हम इस त्यौहार को पूरे उत्साह से मनाते हैं। हालांकि हम अमेरिका में पटाखे नहीं जला सकते परंतु नए कपड़े पहनकर पूजा करते हैं व मिठाई खाते हैं।

यह त्यौहार हमें भारत व अपने परिवार की याद दिलाता है। मुझे भारत में अपने परिवार के साथ यह त्यौहार मनाना अच्छा लगता है, लेकिन हमारी पाठशाला में छुट्टियाँ न होने के कारण हम प्रतिवर्ष भारत नहीं जा सकते।

भारतीय इतिहास की जानकारी मुझे अमर चित्र कथा नाम की पुस्तकें पढ़ने से प्राप्त हुई है। मुझे हिंदी की पुस्तकें पढ़ने का बहुत शौक है। हिंदी मुझे भारत से जुड़े रहने में सहायता देती है।

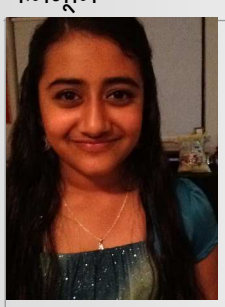

मेरा फैसला सही था

मेरा नाम अक्षया रामास्वामी है। मैं आठवीं कक्षा में पढ़ती हूँ। मैं तेरह साल की हूँ और पिस्कैटवे हिंदी पाठशाला में उच्च स्तर-२ में पढ़ती हूँ। मुझे पुस्तक पढ़ना, चित्र खींचना, और कहानी लिखना पसंद है। मुझे नई भाषाएँ सीखना भी बहुत अच्छा लगता है।

पाँच साल पहले, मुझे हिंदी नहीं आती थी। हिंदी में, मै "हाँ" या "ना" नहीं बोल सकती थी। मुझे पता था की हिंदी भारत की राष्ट्र भाषा है। इसलिए मैं हिंदी सीखना चाहती थी। हिंदी यू.एस.ए. एक हिंदी पाठशाला है। मुझे मालूम था कि, कई लोग इस पाठशाला में हिंदी पढ़ने के लिए आये थे। इसलिए मैंने सोचा कि इस पाठशाला में जाकर हिंदी पढ़ें।

जब मैं आठ साल की थी, तब मैंने हिंदी पढ़ना शुरू किया। हर शुक्रवार को मैं हिंदी पाठशाला जाती हूँ। हिंदी पाठशाला में, मैं लिखना, पढ़ना और बोलना सीखती हूँ,। वर्णमाला से व्याकरण तक, मैंने बहुत हिंदी सीखी।

प्रथमा-१ में, मैंने वर्णमाला और छोटे-छोटे शब्द सीखे। प्रथमा-२ में, मैंने छोटे वाक्य, अमात्रिक शब्द चित्र और गिनती सीखी। मध्यमा-१ में, मैंने मात्रा, बड़े शब्द, गिनती और सचित्र मात्रिक शब्द सीखे। मध्यमा-२ में मैंने व्याकरण और गिनती सीखी। उच्चस्तर-१ में, मैंने व्याकरण तथा वाक्य रचना, कहानी पढ़ना, और कठिन शब्दों को लिखना सीखा। इस वर्ष, उच्चस्तर-१ स्तर में, मैं कठिन व्याकरण और कहानी की पुस्तकें पढ़ना सीख रही हूँ।

मेरी हिंदी पाठशाला का अनुभव बहुत अच्छा रहा। अभी मुझे हिंदी लिखना, पढ़ना, और बोलना आता है। मेरा हिंदी सीखने का फैसला सही था।

ईशा शर्मा: मैं छटवीं कक्षा में पढ़ती हूँ और पिसकैटवे हिन्दी पाठशाला में उच्च स्तर-२ की छात्रा हूँ। मुझे वायलिन, संगीत, भरत नाट्यम, पढ़ना, क्राफ्ट, चित्रकला, इत्यादि में रूचि है।

मेरा अनुभव

जब मैं करीब पाँच साल की थी, मेरी नानीजी भारत से आई थी। वह मुझे खूब सारी कहानीयाँ सुनाती थी। परंतु जब मैंने उन कहानीयों को पढ़ने की कोशिश की तो मुझे पता चला की वह एक दूसरी भाषा में लिखे थे! फिर मुझे जिज्ञासा हुई की मैं इस भाषा को कैसे पढ़ू? तब मेरी नानी ने मुझे हिन्दी पढ़ना सिखाया।

मेरी नानी ने मुझे अक्षर, गिनती, मात्रा, और थोडा पढ़ना भी सिखा लीया। जब मेरी नानी वापिस भारत गई, मेरे माता-पिता को हिन्दी यू.एस.ए के बारे में पता चला और मुझे उस में डाल दीया। मैंने वहाँ पर हिन्दी सीखना जारी रखा।

अब मैं हिन्दी में बोल, पढ़, और लिख भी सकती हूँ। जब भी मैं अपनी नानी और नाना से बात करती हूँ, मैं हिन्दी में ही बात करती हूँ। कभी-कभी मैं उनको कविताए भी सुनाती हूँ, और उन्हे मुझ पर गर्व होता है।

तो यह है मेरा हिन्दी का अनुभव।

- ईशा शर्मा
पिसकैटवे हिन्दी पाठशाला
उच्च स्तर-2

शब्द पहेली

अर्चना कुमार

इस शब्द पहेली में केवल संयुक्त शब्द (आधे अक्षर वाले शब्द) ही लिए गए हैं।

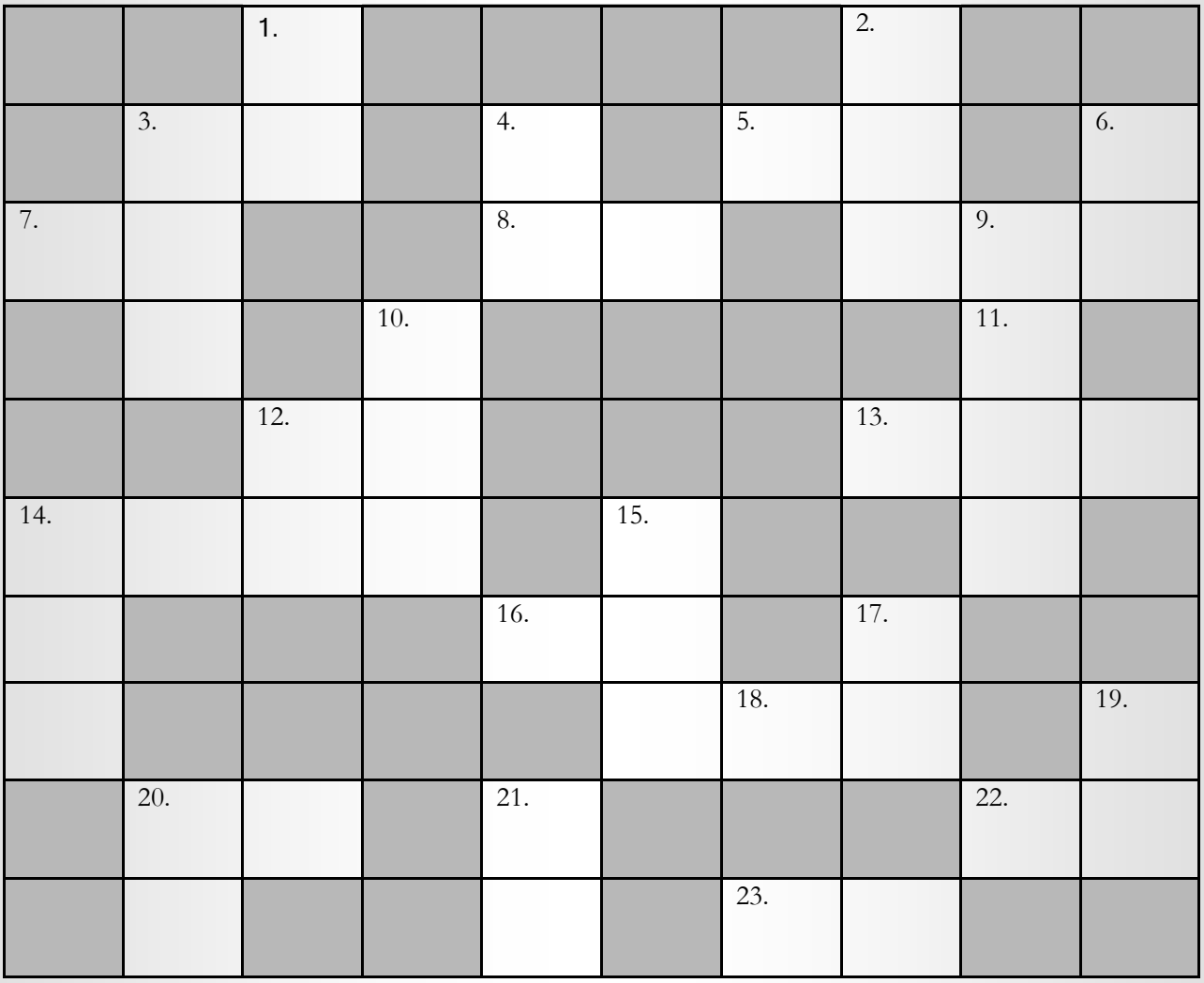

ऊपर से नीचे

1. Board
2. Balloons
3. Truthfulness
4. Flag
6. Boat
10. Office
11. Spoon
14. Arrangement
15. God
17. Capital of India
19. Waste
20. Cups
21. Dirt, Clay

बाएँ से दाएँ

3. Strictness
5. Stain
7. Child
8. Birth
9. Brother
12. Free
13. Courage
14. Behavior
16. World
18. Cat
20. Thirst
22. Stubborn
23. Concentration

बूझो तो जाने

अर्चना कुमार

1.			2.				3.		4.
						5.			
					6.				
7.			8.					9.	
10.	11.				12.		13.		
	14.								15.
				16.		17.		18.	
19.					20.		21.		
			22.						
23.					24.		25.		

ऊपर से नीचे

1. बर्फ से ढका अडिग खड़ा, सदैव करता है भारत की रक्षा।
2. आलू नहीं हूँ, बुखार नहीं हूँ, बस गोल-गोल छोटा सा फल हूँ मैं।
3. पैर नहीं, पर दो हाथों से दिनभर चलती रहती, नहीं कभी मैं रुकती।
4. 32 मोतियों में रहती हूँ घिरी, मेरे बिना बात न कोई हो सकती।
5. छोटा सा हूँ फुर्तीला सा, सवारी करते मेरी बप्पा। (गणेश जी)

7. मैं हूँ इक सर्वनाम, वह से मिलता-जुलता मेरा नाम।

11. चलता हूँ 2, 4 या 6 पहिए पर, पहुँचाता हूँ सबको मंजिल पर।

12. चारों ओर बाँटू ज्ञान ही ज्ञान, मेरे बिना ज्ञानी बनना नहीं आसान।

13. कभी इसे हम खाते हैं, रूप बदलते ही पीते हैं या उड़ा देते हैं। न इसका कोई आकार न रंग, जीवन है बस इसके संग।

15. हरी है मन भरी है, राजा जी के बाग में दोशाला ओड़े खड़ी है।

17. जगत का पालनहार हूँ, कभी सम्बोधन का आधार हूँ, दुःख हो या सुख सदा करता उद्धार हूँ।

21. मुझ में नहीं कोई भलाई, मुझे करने से होती जग हँसाई।

मैं तो हूँ बस एक बुराई, बस तुम मिलकर रहना भाई।

22. आगे-आगे माँ पीछे-पीछे बच्चे, छुक-छुक करती जाती, जगह-जगह की सैर कराती।

बाएँ से दाएँ

1. भाषा हूँ मैं सबकी प्यारी, देवनागरी है मेरी साड़ी। जैसे माँ के माथे पर लगी हुई हो बिंदी न्यारी।।

2. मैं हूँ मीठा और रसीला, सबके मन को भाता। इस बड़ी सी दुनिया में, फलों का राजा मैं कहलाता।।

5. रंग-बिरंगी गोल-गोल (गोलम गोल) सुहागिनें पहनें करके मोल।

6. तीन अक्षर का मेरा नाम, उल्टा सीधा एक समान, सैर कराऊँ पानी की मौजों की रवानी की।

8. कभी हूँ संज्ञा कभी क्रिया, थाली मेरी प्रिया। मेरे बिना मुश्किल है जीना।

9. दो अक्षर का मेरा नाम, खाता हूँ मैं सुबह और शाम। रहता हूँ फिर भी भूखा, जल्दी बोलो मेरा नाम।।

10. हर जगह मैं हूँ रहती, तुम्हारे आस-पास मैं बहती हूँ। मेरा रूप रंग आकार नहीं, मैं सबको जीवन देती हूँ।।

14. मैं हूँ इक रंग न्यारा, धरती का हूँ सबसे प्यारा। (राज दुलारा)

16. नारंगी है मेरा रंग, अंत हटा दो बन जाऊँ संत।

18. यह है इक बुराई, इसे कभी न खेलना भाई।

19. उजाले में चलती हूँ संग-संग, अंधेरे में गुम होकर करती हूँ दंग। चाहे तुम अपना लो कोई भी ढंग, छू न सकोगे मेरा कोई अंग।

20. तीन अक्षर से मिलकर बनता, कीचड़ में हूँ खिलता, असर जिसका नहीं मुझपर दिखता।

23. कटोरे में कटोरा, बेटा बाप से भी गोरा।

24. एक जानवर ऐसा, जिसकी दुम पर पैसा।

25. कच्ची तो खट्टी-खट्टी, पकी तो मीठी-मीठी। रंग की भूरी-भूरी, सब खाते मुझको पूरी-पूरी।।

पहेलियों के उत्तर

शब्द पहेली

		1. त					2. गु		
	3. स	ख्ती		4. ध्व		5. ध	ब्बा		6. नै
7. ब	च्चा			8. ज	न्म		रे	9. भै	य्या
	ई		10. द					11. च	
		12. मु	फ्त				13. हि	म्म	त
14. व्य	व	हा	र		15. ई			च	
व				16. वि	श्व		17. दि		
स्था					र	18. बि	ल्ली		19. र
	20. प्या	स		21. मि				22. जि	द्दी
	ले			ट्टी		23. ध्या	न		

बूझो तो जाने

1. हि	न्दी		2. आ	म			3. घ		4. जी
मा			लू			5. चू	ड़ी		भ
ल			बु		6. ज	हा	ज		
7. य			8. खा	ना				9. पे	ट
10. ह	11. वा		रा		12. पु		13. पा		
	14. ह	रा			स□		नी		15. भु
	न			16. सं	त	17. रा		18. स	ट्टा
19. प	र	छा	ई		20. क	म	21. ल		
			22. रे				ड़ा		
23. ना	रि	य	ल		24. मो	र	25. ई	म	ली

Announcing... **A PROVOCATIVE NEW BOOK**

BEING DIFFERENT

An Indian Challenge to Western Universalism

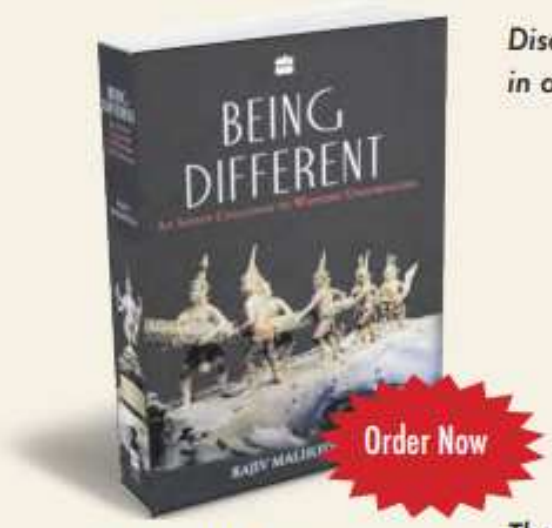

HarperCollins Publishers India

Price: $19

Discover how our cultural proclivities give us an "Indian advantage" in a competitive world:

- Know our proven ability to manage profound differences and complexities, engage creatively.
- Appreciate our peaceful integration of many diverse cultures, religions and philosophies.
- Harness our cultural and philosophical capital for competitive advantages in order to lead rather than follow in global affairs.
- Be clear about defining Indian identity and soft power.
- Learn how dharma teaches us to overcome age-old conflicts between religion & science, believers & atheists, insiders & outsiders.

The best-selling author shows how to reverse the gaze to look at the West, repositioning Indian civilization from being the observed to the observer.

"BEING DIFFERENT provides intriguing answers to some of the questions that perplex both Indians and other India watchers. How are Indian businesses able to thrive despite our country's weak infrastructure? What accounts for the instinctive environmentalism observed in Indian culture or the prolific and creative outpourings of Bollywood? How have jatis served as a structure of business self-organization and decentralized governance? Are there cultural factors that help our competitiveness in certain industries, such as IT, and that do not apply to other industries?" - ***R. Vaidyanathan, Professor of Finance, Indian Institute of Management, Bangalore.***

"A fitting and major response to Samuel Huntington's position on 'who are we?' as the West." - ***John M. Hobson, Univ. of Sheffield, UK***

"This work commands an amazingly wide scholarship across Indian civilization, Western civilization, and comparative philosophy and religion." - ***R. Puligandla, Univ. of Toledo***

"Much reflection and many a good argument should follow upon Malhotra's unique achievement." - ***Francis Clooney, Jesuit and Harvard Professor***

Buy at Hindi Mahotsav on May 19-20, 2012

Order From: www.BeingDifferentBook.com

Author contact: rajivmalhotra2007@gmail.com